विशेष डिजिटल अंक

सच को समर्पित समाचार पत्रिका

24 अगस्त 2020, मूल्य ₹25

आउटलुक

www.outlookhindi.com



आज की राम कथा

अयोध्या में मंदिर बाद राजनीति और डिजिटल पीढ़ी के बदलते राम के साथ पौराणिक किस्सागोई का रंग-रूप

RNI NO. DELHIN/2009/26981 facebook.com/outlookhindi twitter.com/outlookhindi

24



नई पीढ़ी के राम

मंदिर बाद राजनीति के साथ सामाजिक परिवेश में भी बदलाव के संकेत





कवर डिजाइन: **दीपक शर्मा,** कवर फोटो: **त्रिभुवन तिवारी**

आउटलुक

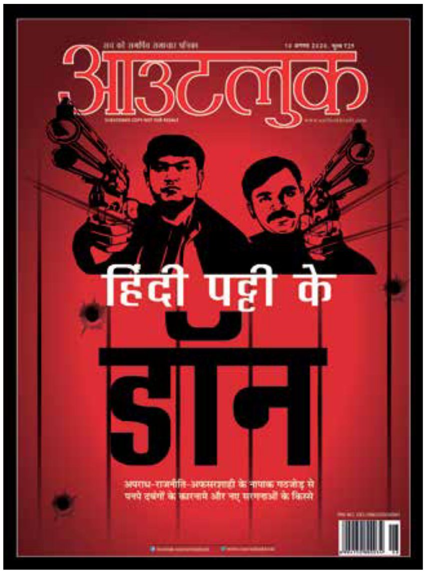
प्रधान संपादक: रुबेन बनर्जी
कार्यकारी संपादक: गिरिधर झा
डिप्टी एडिटर: सुनील कुमार सिंह
एसोसिएट संपादक: प्रशांत श्रीवास्तव
वरिष्ठ सहायक संपादक: हरीश मानव
सहायक संपादक: आकांक्षा पारे काशिव
वेब टीम: उपासना पांडेय, अक्षय दुबे
एडिटोरियल कंसल्टेंट: हरिमोहन मिश्र
डिजाइन: दीपक शर्मा (आर्ट डायरेक्टर) लीला, प्रवीण कुमार.जी, विनय डॉमनिक (सीनियर डिजाइनर) रोहित कुमार राय (डिजाइनर), रंजीत सिंह (विजुअलाइजर)
फोटो सेक्शन: जितेंद्र गुप्ता (फोटो एडिटर), त्रिभुवन तिवारी (चीफ फोटोग्राफर), संदीपन चटर्जी, अपूर्व सलकड़े (सीनियर फोटोग्राफर) सुरेश कुमार पांडे (स्टाफ फोटोग्राफर), जे.एस. अधिकारी (सीनियर फोटो रिसर्चर)
संदर्भ: अलका गुप्ता

बिजनेस कार्यालय:
चीफ एक्जीक्यूटिव ऑफिसर: इंद्रनील रॉय
प्रकाशक: संदीप कुमार घोष
सीनियर वाइस प्रेसिडेंट: मीनाक्षी आकाश
सीनियर जनरल मैनेजर: देववाणी टैगोर, शैलेन्द्र वोहरा
डिजिटल टीम: अमित मिश्रा
मार्केटिंग:
वाइस प्रेसिडेंट: श्रुतिका दीवान
सर्कुलेशन एंड सब्सक्रिप्शन: गगन कोहली, जी. रमेश (साउथ), कपिल ढल (नार्थ), अरुण कुमार झा (ईस्ट)

प्रोडक्शन:
जनरल मैनेजर: शशांक दीक्षित
मैनेजर: सुधा शर्मा, गौरव श्रीवास (एसोसिएट मैनेजर), गणेश साह (डिप्टी मैनेजर)
अकाउंट:
वाइस प्रेसिडेंट: दीवान सिंह बिष्ट
कंपनी सेक्रेटरी एवं लॉ ऑफिसर: अंकित मंगल
प्रधान कार्यालय: ए.बी.-10 सफदरजंग एन्कलेव, नई दिल्ली-110029
संपादकीय कार्यालय: ए.बी.-10 सफदरजंग एन्कलेव, नई दिल्ली-110029
टेलीफोन: 011-71280400, फैक्स: 26191420

संपादकीय ईमेल
edithindi@outlookindia.com
ग्राहकों के लिए संपर्क: 011-71280433, 71280462, 71280307
yourhelpline@outlookindia.com
अन्य कार्यालय:
मुंबई: 022-50990990
कोलकाता: 46004506, **फैक्स:** 46004506
चेन्नई: 42615224, 42615225 **फैक्स:** 42615095
बेंगलूरू: 43715021
प्रधान संपादक: रुबेन बनर्जी
आउटलुक पब्लिशिंग (इंडिया) प्रा.लि. की तरफ से इंद्रनील रॉय द्वारा प्रकाशित। ए.बी.-10 सफदरजंग एन्कलेव, नई दिल्ली से प्रकाशित।

कुल पृष्ठ संख्या 54 कवर सहित



राजनीतिक उठापटक

आउटलुक के 10 अगस्त के अंक में सचिन पायलट की महत्वाकांक्षा और मुख्यमंत्री अशोक गहलोत की बेचैनी पर अच्छी रिपोर्ट है। भाजपा रिसोर्ट पॉलिटिक्स और महत्वाकांक्षी लोगों को शरण देने वाली पार्टी बनकर उभरी है। असम में हेमंता बिस्व सरमा, अरुणाचल में कांग्रेसी विधायकों का बीजेपी खेमे में जाना, 2017 में मणिपुर की घटना हो या उत्तराखंड, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, गुजरात के राज्यसभा चुनाव। सभी एक जैसे उदाहरण हैं।

कृष्ण चंद्र त्रिपाठी | रीवा, मध्य प्रदेश

बड़ा दांव

राजस्थान की सियासी उठापटक में यह तो समझ आ गया है कि सचिन पायलट कुछ ज्यादा ही बड़ा दांव खेल गए। जैसा कि *आउटलुक* के 10 अगस्त के अंक में लिखा है, गहलोत-पायलट के बीच शह-मात जारी है। पायलट, गहलोत के सामने बहुत नौसिखिए साबित हुए। लेकिन इन सबके बीच जनता खुद को ठगा हुआ महसूस करती है।

राधेश्याम तांबटकर | ठीकरी, म.प्र

सत्ता का आकर्षण

आउटलुक के 27 जुलाई अंक में, 'शिवराज का सत्ता विष' पढ़ा। सिंधिया ने जिस तरह मध्य प्रदेश में भारतीय जनता पार्टी पर कब्जा किया, उसने शिवराज सहित कई पुराने नेताओं को फिलहाल विषपान करने के लिए विवश कर दिया। हालांकि उप चुनावों में नतीजों का ऊंट किस करवट बैठेगा, आगे की बातें उस पर तय होंगी।

बृजेश माथुर | गाजियाबाद, उ.प्र

चीनी समीकरण

भारत-नेपाल के वर्षों से मैत्रीपूर्ण संबंध पर चीन दस्तक दे रहा है। संबंध बिगाड़ने में चीन के लिप्त होने के पुख्ता सबूत हैं। चीन की विस्तारवादी नीतियों का नेपाल पर असर है। नेपाल को आर्थिक सहायता की जरूरत है। चीन और नेपाल दोनों ही देशों में कम्युनिस्ट सरकार हैं, ऐसे में दोनों के बीच सामाजिक-सांस्कृतिक समरसता पनप रही है।

गरिमा सिंह | दिल्ली

पुरस्कृत पत्र

इनकी भी चिंता कीजिए

आउटलुक के 27 जुलाई के अंक में, 'देह दूरी का दंश' पढ़ा। हमारा जड़ समाज और उसकी रूढ़ मान्यताओं ने महामारी से ज्यादा विकराल रूप धरा है। यौनकर्मियों की करुणा भरी व्यथा आंखों में आंसू लाने के लिए काफी है। न मानवाधिकारियों को उनकी चिंता है, न ही सत्ता के झंडाबरदारों को। वोट की राजनीति ने समाज के सबसे संवेदी वर्ग को हाशिए पर छोड़ दिया है। शायद ये मतदाता सूची में उस तरह शामिल नहीं हैं या इनके वोट इतने नहीं होते कि किसी उम्मीदवार की जीत-हार पर इनके वोट का फर्क पड़े। 'गणिकाओं' और 'देवदासियों' को अपनाने वाला हमारा देश भारत ऐसा कभी नहीं कर सकता। समाज के स्याह पक्ष पर प्रकाश डालने के लिए *आउटलुक* ने यह कदम उठाया यह अच्छी बात है। इस तरह की खबरों से इनकी भी सुध ली जा सकेगी।

हेमंत कृष्णराव पाटीदार | खरगोन, म.प्र

अब आप अपने पत्र इस मेल पर भी भेज सकते हैं:
hindioutlook@outlookindia.com

श्रेष्ठ पत्र को उपहार स्वरूप 1000 रुपये मूल्य की पुस्तकें

सामयिक प्रकाशन
दरियागंज, नई दिल्ली-110002
samayikprakashan@gmail.com
www.samayikprakashan.com

तकनीकी विकास ने पत्र लेखन की विधा को हाशिए पर जरूर धकेला है, लेकिन यह विधा पूरी तरह खत्म नहीं हुई है। पत्र लेखकों को प्रोत्साहन देने के लिए आउटलुक हिंदी पत्रिका अपने पाठकों के लिए एक योजना ला रही है। किसी भी पत्रिका के लिए प्रतिक्रिया स्वरूप मिलने वाले पाठकों के पत्र महत्वपूर्ण होते हैं। आउटलुक हिंदी पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर 150 शब्दों में अपनी प्रतिक्रिया भेजें और पाएं हिंदी के प्रतिष्ठित सामयिक प्रकाशन की ओर से एक हजार रुपये मूल्य की पुस्तकें। हर अंक में छपने वाले पत्रों में से एक सर्वश्रेष्ठ पत्र चुना जाएगा।

ध्यान रखें कि पत्र साफ लिखे गए हों और लंबे न हों। संबंधित लेख का उल्लेख जरूर करें और अपनी टिप्पणी सटीक रखें। चुने गए पत्र पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। अपना नाम एवं पिन कोड सहित पूरा पता जरूर लिखें। संपादकीय निर्णय सर्वोपरि होगा।

आउटलुक पत्रिका प्राप्त करने के स्थान

दक्षिण: हैदराबाद यादगिरी बुक स्टॉल, 040-66764498, **सिकंदराबाद** उस्मान बुक स्टॉल, 9912850566

उत्तर: दिल्ली - आईबीएच बुक्स एंड मैग्जीन डिस्ट्रिब्यूटर्स, 011-43717798,011-43717799, **लखनऊ** - सुभाष पुस्तक भंडार प्रा. लिमिटेड, 9839022871, **चंडीगढ़** - पुरी न्यूज एजेंसी, 9888057364, **देहरादून**- आदित्य न्यूज एजेंसी, 9412349259, **भोपाल**- इंडियन न्यूज एजेंसी, 9826313349, **रायपुर**- मुकुंद पारेख न्यूज एजेंसी, 9827145302, **जयपुर**-नवरत्न बुक सेलर, 9829373912, **जम्मू**- प्रीमियर न्यूज एजेंसी, 9419109550, **श्रीनगर**- जेपी न्यूज एजेंसी, 9419066192, **दुर्ग (छत्तीसगढ़)** - खेमका न्यूज एजेंसी, 9329023923

पूर्व: पटना- ईस्टर्न न्यूज एजेंसी, 9334115121, **बरौनी** -ज्योति कुमार दत्ता न्यूजपेपर एजेंट, 9431211440, **मुजफ्फरपुर**-अन्नू मैग्जीन सेंटर, 9386012097, **मोतीहारी**- अंकित मैग्जीन सेंटर, 9572423057, **कोलकाता**- विशाल बुक सेंटर, 22523709/22523564, **रांची**- मॉडर्न न्यूज एजेंसी, 9835329939, रवि कुमार सोनी, 9431564687, **जमशेदपुर**-प्रसाद मैग्जीन सेंटर, 2420086, **बोकारो**-त्रिलोकी सिंह, 9334911785,**भुवनेश्वर**-ए. के. नायक, 9861046179, **गुवाहाटी**- दुर्गा न्यूज एजेंसीज, 9435049511

पश्चिम: नागपुर-नेशनल बुक सेंटर, 8007290786, पाठक ब्रदर्स, 9823125806, **नासिक**- पाठक ब्रदर्स, 0253-2506898, **पुणे**- संदेश एन एस एजेंसी, 020-66021340,**अहमदाबाद**-के वी अजमेरा एंड संस, 079-25510360/25503836, **मुंबई**- दंगत न्यूज एजेंसी, 22017494



> कांग्रेस ने अगर धर्मनिरपेक्षता पर सही रुख अपनाया होता, तो देश आज जिस नियति का सामना कर रहा है, वह उसे नहीं करना पड़ता
>
> *पिनराई विजयन, मुख्यमंत्री, केरल*

फीकी दावत

दिल्ली में मैडम के जन्मदिन का जश्न मनाने की पूरी तैयारी थी। सांसदगण मैडम को मानते भी बहुत हैं। मुख्यमंत्री के साथ जारी ट्विटर वार के बावजूद मैडम के लिए पूरा इंतजाम किया गया। चुनिंदा लोग हाजिर हुए। अवसर खुशी का था तो दावत का रंग भी उसी तरह छाया हुआ था। अचानक सोशल मीडिया पर साहब की डिग्री के जाली होने का मामला वायरल हो गया। उमंग के माहौल पर पानी फिर गया। इसके बाद नेताजी का पारा सातवें आसमान पर जा पहुंचा। ट्विटर पर जारी जंग का रंग समय के साथ और गाढ़ा होता जा रहा है। लड़ाई निजी बनती जा रही है। राजनीति में कब कौन कहां चला जाए, कहा नहीं जा सकता।

अयोध्या के बीच कश्मीर

वैसे तो 5 अगस्त को अयोध्या में राम मंदिर के भूमि पूजन की ही गहमागहमी थी, लेकिन उस दौरान कश्मीर को लेकर भी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी काफी सक्रिय थे। चर्चा है कि प्रधानमंत्री ने लखनऊ पहुंचते ही पूर्व केंद्रीय मंत्री और भाजपा के प्रमुख नेता मनोज सिन्हा से मिलने की बात कही। देर रात इस बात का खुलासा भी हो गया कि सरकार के मन में क्या चल रहा था। मनोज सिन्हा जम्मू-कश्मीर के नए उप-राज्यपाल बनाए गए हैं, जबकि पूर्व उप-राज्यपाल जी.सी.मुर्मू को दिल्ली में अहम पद देने की तैयारी है। चर्चा यह भी है कि केंद्र सरकार मनोज सिन्हा को जम्मू-कश्मीर भेजकर राज्य के राजनैतिक दलों को सकारात्मक संदेश देना चाहती है, जो राज्य का विशेष दर्जा खत्म किए जाने के बाद से अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं।

परेशान नीतीश

बाढ़ के संकट में राहत वितरण, सड़कों का जाल बिछाने, ग्रामीण इलाकों में भी बिजली पहुंचाने और नियमित आपूर्ति को लेकर सफलता हासिल करने वाली नीतीश सरकार की पहली बार कोरोना के कारण किरकिरी हो रही है। कैबिनेट की बैठक में जांच की धीमी गति का ममला उठा तो स्वास्थ्य मंत्री मंगल पांडेय ने ठीकरा सचिव उदय सिंह कुमावत के सिर फोड़ दिया, कहा कि वे उदासीन हैं। बस सीएम फट पड़े और 48 घंटे के भीतर उनका तबादला हो गया। कोरोना काल के दौरान दो स्वास्थ्य सचिव बदल दिए गए हैं। 20 मई को ही संजय कुमार को हटाकर कुमावत को लाया गया था। अब नीतीश कुमार के भरोसेमंद माने जाने वाले प्रत्यय अमृत को जिम्मा मिला है। वह कितनी राहत दे पाएंगे यह तो वक्त बताएगा।

अध्यक्ष बनने की ख्वाहिश

ऐतिहासिक पार्टी के सांसद महोदय नाराज हैं और उन्होंने विद्रोह का झंडा उठा लिया है। वे दिल्ली दरबार में कुछ विधायकों के साथ हाजिरी लगा चुके हैं तथा कुछ और विधायकों के समर्थन का दावा कर रहे हैं। वे ताकत इतनी बता रहे हैं कि बगावत हुई तो सरकार पर संकट आ सकता है। खुद खामोश हैं मगर सहयोगियों से 'एक व्यक्ति, एक पद' की भी रट लगवा रहे हैं। करीबी बताते हैं कि उनका निशाना प्रदेश अध्यक्ष की कुर्सी पर है। इस बीच वे विपक्ष के भी संपर्क में हैं। देखना है ज्यादा चालाकी कहीं भारी न पड़ जाए।

घोटाले के बहाने

नौ महीने पुरानी हरियाणा की भाजपा-जजपा गठबंधन सरकार में सहयोगी जननायक जनता पार्टी (जजपा) के प्रमुख और उप-मुख्यमंत्री दुष्यंत चौटाला के अधीन विभागों में एक के बाद एक घोटाले चर्चा में हैं। चावल मिलों में सरकारी धान का घोटाला, लॉकडाउन के दौरान शराब तस्करी और प्रॉपर्टी रजिस्टरी घोटालों से गठबंधन सरकार विपक्ष के निशाने पर है। इन घोटालों की जांच और कार्रवाई के लिए मुख्यमंत्री मनोहर लाल खट्टर एक के बाद एक संबंधित मुलाजिमों और अफसरों पर कार्रवाई कर रहे हैं। चर्चा है कि बार-बार घोटालों में दुष्यंत के हिस्से के विभागों के ही नाम क्यों आ रहे हैं? कही भाजपा रणनीति के तहत गठबंधन में सहयोगी जजपा पर दबाव तो नहीं बना रही है, इसलिए दुष्यंत के विभाग ही निशाने पर हैं? अन्य किसी मंत्री के विभाग में अनियमितताओं की अभी तक कोई खबर नहीं है। दुष्यंत चौटाला से नाराज उनकी पार्टी के ही कुछ विधायकों को घोटालों पर चर्चा को बढ़ाते हुए यहां तक कहने से भी गुरेज नहीं है कि एक ही आदमी के पास 11 महत्वपूर्ण विभागों का बोझ रहेगा तो वह इन विभागों पर ध्यान केंद्रित कैसे कर पाएगा?

अब दारोमदार अमल पर

पहली और दूसरी शिक्षा नीति के अनेक प्रस्तावों पर अमल नहीं, इसलिए तीसरी नीति पर संशय



प्रकाश कुमार

साल 1968 में घोषित पहली शिक्षा नीति हर आदमी के जीवन को समृद्ध करने, राष्ट्र की प्रगति और सुरक्षा में उन्हें योगदान देने की शक्ति देने, साझी नागरिकता और संस्कृति को बढ़ावा देने और राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने की परिकल्पना पर आधारित थी। तत्कालीन इंदिरा गांधी सरकार ने इसकी घोषणा की थी। हर स्तर पर गुणवत्ता में सुधार, शिक्षा के अवसर के निरंतर विस्तार, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी पर फोकस के साथ 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा और नैतिक मूल्यों के विकास की इस नीति में शिक्षा प्रणाली में आमूलचूल बदलाव की जरूरत बताई गई थी।

पहली शिक्षा नीति भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66), जिसे कोठारी आयोग के नाम से जाना गया, की सिफारिशों के आधार पर तैयार की गई थी। राज्यों के ज्यादा रुचि न दिखाने के कारण उसके ज्यादातर प्रस्ताव कागजों पर ही रह गए। इसका एक प्रमुख कारण यह था कि इसमें 10+2+3 पैटर्न को पूरे देश में एक समान लागू करने की बात कही गई थी, लेकिन तब तक संविधान के तहत शिक्षा पूर्ण रूप से राज्य का विषय था।

नया सिस्टम: पांचवीं तक की पढ़ाई मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में होगी

42वें संविधान संशोधन के माध्यम से 1976 में शिक्षा को संविधान की समवर्ती सूची में शामिल किया गया और इसके अगले साल 10+2+3 पैटर्न भी लागू किया गया। हालांकि बाद के वर्षों में शैक्षिक सुविधाओं में व्यापक विस्तार दिखा, लेकिन 1968 की नीति की अनेक बातों पर अमल न हो सका। नतीजा यह हुआ कि शिक्षा की पहुंच, गुणवत्ता, उपयोगिता और खर्च जैसी समस्याएं साल दर साल बढ़ती गईं।

समस्या के समाधान के लिए मई 1986 में राजीव गांधी सरकार दूसरी शिक्षा नीति लेकर आई। 1992 में प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिंह राव के शासनकाल में इसमें कुछ अतिरिक्त बातें जोड़ी गईं। इनमें शिक्षा की पहुंच के नए लक्ष्य तय करने के साथ परीक्षा प्रणाली में सुधार करना शामिल था। 1986 की नीति में सबको प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने, ऐसी व्यवस्था करने जिससे 14 वर्ष तक के बच्चे स्कूल न छोड़ें और शिक्षा की गुणवत्ता में व्यापक सुधार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। सबको शिक्षा का समान अवसर उपलब्ध कराने के साथ उच्च शिक्षा की गुणवत्ता और मानकों में सुधार पर भी जोर दिया गया।

इसके अलावा, प्रौढ़ शिक्षा, प्राथमिक स्तर से पहले के बच्चों की देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई), रोजगारपरक शिक्षा, भारतीय भाषाओं को बढ़ावा और मूल्यपरक शिक्षा दूसरी नीति के मुख्य आधार थे। इसमें शोध को बढ़ावा देने के अलावा छात्रों को करिअर के विकल्प के रूप में स्वरोजगार के लिए प्रोत्साहित किया गया। 1986 की नीति लागू होने के बाद शिक्षण सुविधाओं का काफी विस्तार हुआ। हालांकि शिक्षा का अधिकार (आरटीई) कानून लागू करने में 41 साल लग गए। इसे अंततः 2009 में लागू किया जा सका। अखिल भारतीय उच्च शिक्षा सर्वेक्षण के अनुसार देश में 993 विश्वविद्यालय, 39,931 महाविद्यालय और 10,725 स्टैंडअलोन संस्थान हैं। इनकी बदौलत भारत, अमेरिका और चीन के बाद उच्च शिक्षा संस्थानों का तीसरा सबसे बड़ा नेटवर्क बन गया है। स्कूलों की संख्या भी 15.50 लाख हो गई, जिनमें 24.78 करोड़ छात्र पढ़ते हैं। फिर भी, पहली और दूसरी नीति के कई एजेंडे अभी अधूरे हैं।

इसे आगे बढ़ाने के लिए नरेंद्र मोदी सरकार हाल ही नई शिक्षा नीति लेकर आई है। इसमें स्कूल और उच्च शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता सुधारने और उन्हें अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप बनाने के लिए बड़े 'परिवर्तनकारी सुधार' प्रस्तावित हैं। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए नई शिक्षा नीति-2020 में 10+2 पाठ्यक्रम को 5+3+3+4 में बदलने का प्रस्ताव है, ताकि तीन से 18 वर्ष के छात्रों के लिए ईसीसीई को औपचारिक स्कूली शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जा सके और 2030 तक स्कूली शिक्षा सर्वसुलभ हो।

स्कूली शिक्षा के शुरुआती चरण में ही कंप्यूटर साक्षरता की बात कही गई है ताकि छात्रों को 21वीं सदी के कौशल से लैस किया जा सके। छठी कक्षा से ही व्यावसायिक शिक्षा को मुख्यधारा की शिक्षा के साथ जोड़ने का प्रस्ताव है, ताकि 2025 तक कम से कम 50 फीसदी छात्रों को रोजगारन्मुखी शिक्षा मिल सके। बच्चे बेहतर तरीके से सीख सकें, इसके लिए एनईपी-2020 में कम से कम पांचवीं कक्षा तक बच्चों को उनकी मातृभाषा, घरेलू भाषा या क्षेत्रीय भाषा में पढ़ाने पर जोर दिया है। इसमें यह सुनिश्चित करने को कहा गया है कि कक्षा तीन उत्तीर्ण होने तक छात्र बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान हासिल कर लें।

छात्रों में परीक्षा का तनाव कम करने और रटने की व्यवस्था समाप्त करने के लिए, नीति में पाठ्यक्रम को फिर से डिजाइन करने का प्रस्ताव है ताकि कोर्स घटाया जा सके। इसमें मूल्यांकन प्रणाली में बदलाव और बोर्ड परीक्षाओं को 'आसान' बनाने का भी प्रस्ताव है, ताकि इसे छात्रों की याद करने की क्षमता की परीक्षा के बजाय ज्ञान की परीक्षा बनाया जा सके।

इस नीति में सभी विश्वविद्यालयों के लिए समान प्रवेश परीक्षा आयोजित करने और अन्य प्रवेश परीक्षाओं में बदलाव का प्रस्ताव है। छात्रों के पास 10वीं के बाद पढ़ाई कुछ समय के लिए रोकने और बाद में फिर 11वीं कक्षा में प्रवेश लेने का विकल्प होगा। एनईपी-2020 में अंडर-ग्रेजुएट की पढ़ाई चार साल करने और इसे बहुविषयक बनाने का प्रस्ताव है। छात्रों के पास किसी भी वर्ष पढ़ाई छोड़ने और बाद में फिर दाखिला लेने का विकल्प होगा। यह सुविधा तीन साल के अंडर-ग्रेजुएट कोर्स में दाखिला लेने वालों को भी मिलेगी। यदि कोई छात्र पहला साल पूरा करने के बाद पढ़ाई छोड़ता है तो उसे सर्टिफिकेट, दूसरे साल के बाद डिप्लोमा और तीसरे साल के बाद स्नातक की डिग्री प्रदान की जाएगी।

चार साल के बहुविषयक अंडर-ग्रेजुएट कोर्स में छात्रों को अमेरिका की तर्ज पर 'मेजर' और 'माइनर' का विकल्प चुनने के साथ रिसर्च में डिग्री कोर्स का भी विकल्प मिलेगा। मास्टर्स में दो प्रकार के कोर्स होंगे। तीन वर्षीय स्नातक वाले छात्रों के लिए यह दो वर्ष का और चार वर्षीय स्नातक वाले छात्रों के लिए एक वर्ष का होगा। पीएचडी के लिए मास्टर्स डिग्री या रिसर्च के साथ चार साल की बैचलर्स डिग्री अनिवार्य होगी। एमफिल का कोर्स बंद किया जा रहा है।

नई नीति में भारतीय उच्च शिक्षा आयोग (एचईसीआइ) के गठन का प्रस्ताव है। काम के अनुसार इसके चार वर्टिकल होंगे- नियमन, मान्यता, फंडिंग और शैक्षणिक मानक। यह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी), अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआइसीटीई) और राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (एनसीटीई) जैसे मौजूदा नियामकों का स्थान लेगा। श्रेष्ठ रैंकिंग वाले विदेशी विश्वविद्यालय भारत में अपना कैंपस खोल सकेंगे। कॉलेजों को स्वायत्तता देने की मौजूदा नीति जारी रहेगी। इसके तहत धीरे-धीरे हर कॉलेज को डिग्री प्रदान करने वाले स्वायत्त कॉलेज अथवा किसी विश्वविद्यालय के घटक कॉलेज के रूप में विकसित किया जाएगा। इस बारे में नई नीति में कहा गया है, "एक पारदर्शी प्रणाली के जरिए कॉलेजों को चरणबद्ध तरीके से स्वायत्तता देने का तंत्र स्थापित किया जाएगा। मान्यता के हर चरण के न्यूनतम मानदंड पूरे करने के लिए कॉलेजों को प्रोत्साहित किया जाएगा, उनकी मेंटरिंग की जाएगी और इन्सेंटिव दिया जाएगा।" नई शिक्षा नीति के तहत ओपन और डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा देकर 2035 तक उच्च शिक्षा में ग्रॉस एनरोलमेंट रेशियो (जीईआर) बढ़ाकर 50 फीसदी करने का प्रस्ताव है, जो अभी 26.3 फीसदी है। अनुसंधान की मजबूत संस्कृति को बढ़ावा देने और उच्च शिक्षा के सभी क्षेत्र में अनुसंधान क्षमता विकसित करने के लिए राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन (एनआरएफ) नाम से एक शीर्ष निकाय गठित किया जाएगा।





नया कदमः उप-राष्ट्रपति वेंकैया नायडू को शिक्षा नीति की प्रति सौंपते शिक्षा मंत्री 'निशंक' (ऊपर), छठवीं से मिलेगी रोजगारपरक शिक्षा

एनईपी-2020 में शिक्षा प्रणाली में बदलाव के लिए कई अन्य प्रस्ताव भी हैं। शिक्षा पर निवेश 'उल्लेखनीय' रूप से बढ़ाने की बात है। इसमें कहा गया है कि केंद्र और राज्य सरकारें शिक्षा क्षेत्र में सार्वजनिक निवेश को जल्द से जल्द जीडीपी के छह फीसदी तक पहुंचाने के लिए मिलकर काम करेंगी। इस संबंध में कहा गया है, "उच्च-गुणवत्ता वाली और उचित सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली के लिए यह अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत के भविष्य की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक और तकनीकी प्रगति और विकास के लिए यह आवश्यक है।" नीति में परोपकारी माध्यमों से धन जुटाने का उल्लेख है। कोई भी सार्वजनिक संस्था इसकी पहल कर सकती है।

नीति में कहा गया है, "शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय जीडीपी के छह फीसदी तक पहुंचाने की बात 1968 की पहली नीति में कही गई थी। 1986 की दूसरी नीति और 1992 की समीक्षा में भी इसे दोहराया गया, लेकिन दुर्भाग्य से वास्तविक व्यय इसके करीब भी नहीं पहुंचा है।" हालांकि नई नीति में भी इस लक्ष्य को हासिल करने की कोई समय-सीमा तय नहीं है। भारतीय जनता पार्टी ने 2014 के लोकसभा चुनाव में अपने घोषणापत्र में शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय को जीडीपी के छह फीसदी तक ले जाने की बात कही थी, जो 2013-14 में 3.84 फीसदी थी।

पर्यावरण पर नई दृष्टि जरूरी

बहुविषयक पढ़ाई पर्यावरण समझ विकसित करने में मददगार, मगर प्रयोगधर्मी शिक्षा भी अनिवार्य



विपुल सिंह

कई वर्षों से पर्यावरण इतिहास के पठन-पाठन से जुड़े होने के कारण यह गहरा एहसास है कि अर्थशास्त्र, भूगोल, जीव विज्ञान और रसायन विज्ञान जैसे विषयों पर जानकारी के अभाव में उसे ठीक से समझ पाना काफी मुश्किल है। इस मायने में पर्यावरण अध्ययन का संबंध बहुविषयक है। इसके दायरे में वह सब आता है जिससे मानव सभ्यता विकसित हुई और उसका ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य क्या है। हम न केवल जानवरों, पौधों, अन्य जीवों, पानी, मिट्टी, वायु, महासागर, पृथ्वी की पपड़ी, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन और महासागर की धाराओं आदि का अध्ययन करते हैं, बल्कि लोगों के साथ उनके संबंधों का भी अध्ययन करते हैं। वे एक-दूसरे के साथ इस तरह गुथे हुए हैं कि विज्ञान और भूगोल से लेकर मानविकी तक जैसे कई विषय इसमें समा जाते हैं।

इसी मायने में नई शिक्षा नीति, 2020 में बहुविषयक पाठ्यक्रम का घोषित उद्देश्य लंबे समय से चली आ रही बाधा को कम कर सकता है। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) को 1992 में 'पर्यावरण संरक्षण' को एक कोर के रूप में शामिल करने के लिए संशोधित किया गया था, जिसके आसपास एक राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा बाद में विकसित की गई थी। कक्षा 3 से 5 के छात्रों को स्कूलों में पर्यावरण के बारे में पढ़ाया जाता था। 2006 में सुप्रीम कोर्ट के निर्देश के बाद, पर्यावरण स्नातक स्तर पर भी अध्ययन का अनिवार्य विषय बन गया। भले ही पर्यावरण शिक्षा स्कूल पाठ्यक्रम का अनिवार्य हिस्सा रही हो, यह जटिल पर्यावरणीय मुद्दों को हल करने से नहीं जुड़ी है। दुर्भाग्य से, सिर्फ किताबी पढ़ाई से छात्रों में पर्यावरण की समझ नहीं विकसित की जा सकती है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि एनपीई अपने समय से आगे का विचार था और पिछले कुछ दशकों में भारत ने उसके आधार पर ही तीव्र आर्थिक प्रगति की। लेकिन अब जब दुनिया में तेजी से जबरदस्त बदलाव हो रहे हैं, इसमें बदलाव की जरूरत थी। आज हमें जलवायु परिवर्तन जैसी नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग आज काफी अहम हो गया है। जब हम सतत विकास की बात करने लगे हैं तो यह जरूरी है कि हमारी शिक्षा नीति में पर्यावरण जागरूकता पर विशेष जोर हो और शिक्षा, समस्याओं को सुलझाने से जुड़ी हो।

हमें इस पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है कि ऐसा क्यों है कि पर्यावरण के अच्छे और बुरे के बारे में बच्चों को पढ़ाए जाने के बावजूद समाज का व्यवहार नहीं बदला है। ज्ञान प्रदान करने के पारंपरिक तरीकों ने वांछित परिणाम नहीं दिया है।

इसका समाधान इस तथ्य में निहित है कि प्रकृति के साथ संबंध केवल प्रकृति में ही बनाया जा सकता है। यह केवल छात्रों के प्रकृति के साथ साक्षात्कार से सम्भव है। हमें उन्हें प्रयोगों में शामिल करना और चीजों को स्वयं बढ़ाना सिखाना होगा, ताकि वे प्रकृति प्रेमियों के रूप में विकसित हो सकें। पर्यावरण शिक्षा का बेहतर तरीका यह है कि छात्र शिक्षक वर्ग के साथ जंगल एवं विभिन्न स्थानों का भ्रमण कर सच्चाई का अनुभव करें। हमें स्कूलों में गार्डन स्थापित करना चाहिए जो न केवल छात्रों को पर्यावरण से जोड़ेगा, बल्कि उनके जीव विज्ञान के पाठों को भी जीवंत करेगा। इस तरह का सीखना न केवल आसान है, बल्कि स्थायी भी है। इसी तरह, रीसाइक्लिंग पर व्यावहारिक कौशल, कचरे का निपटारा और छात्रों को जैविक खेती की शिक्षा प्रदान की जा सकती है। इन सब की बात इस नई शिक्षा नीति में की गई है।

नई शिक्षा नीति में पर्यावरणीय जागरूकता, जल और संसाधन संरक्षण और स्वच्छता शामिल हैं; और स्थानीय समुदायों का सामना करने वाले महत्वपूर्ण मुद्दों के ज्ञान पर विशेष जोर दिया गया है। पर्यावरण शिक्षा में जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, अपशिष्ट प्रबंधन और स्वच्छता के विषयों को शामिल किया गया है। यह जैविक विविधता के संरक्षण, जैविक संसाधनों के प्रबंधन और जैव विविधता, वन और वन्यजीव संरक्षण के बारे में भी बात करता है। ये तत्व वास्तव में स्थायी भविष्य के लिए अनिवार्य हैं। हम जानते हैं कि शिक्षित आबादी आर्थिक विकास की कुंजी है। तेजी से वैश्वीकृत होती अर्थव्यवस्था में यह भी आवश्यक है कि आर्थिक विकास सतत विकास से जुड़ा हो। यह संयुक्त राष्ट्र के एक शीर्ष एजेंडे का हिस्सा भी है और इस पर भारत ने भी हस्ताक्षर किए हैं।

हाल के वर्षों में मशीनों और डिजिटल प्रौद्योगिकी में प्रगति ने नए अवसरों की पेशकश की है। हम युवाओं को नौकरियों के लिए तैयार करना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि हमारी औपचारिक शिक्षा रोजगार और आवश्यक कौशल से जुड़ी हो। यह विज्ञान, सामाजिक विज्ञान और मानविकी के छात्रों के बीच बहु-विषयक क्षमताओं को विकसित करके हासिल किया जा सकता है।

भारत की जनसांख्यिकीय संरचना ने भी यह मांग की कि युवाओं को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान की जाए। भारत की आबादी का 62 प्रतिशत 15 से 59 के आयु वर्ग में है और 35 वर्ष से कम उम्र की यहां दुनिया की सबसे बड़ी आबादी है। भारत की आबादी में इस आयु वर्ग का हिस्सा 2036 में सर्वाधिक, 65 प्रतिशत होगा। इसलिए आश्चर्य की बात नहीं कि सरकार ने उसी वर्ष तक नई शिक्षा नीति को हासिल करने का लक्ष्य रखा है। देखना होगा कि सरकार इससे भी बड़ी चुनौती, जो बहुविषयकता पर आधारित पाठ्यक्रम विकसित करने की है, से किस प्रकार निपटती है और अपने आपको राजनीतिक मजबूरियों से कैसे दूर रख पाती है।

पाठ्यक्रम का हिस्सा होने के बावजूद पर्यावरण शिक्षा अहम मुद्दों के हल में नाकाम रही, सिर्फ किताबी पढ़ाई से पर्यावरण की समझ नहीं विकसित की जा सकती

(लेखक पर्यावरण इतिहासकार और दिल्ली विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग में प्रोफेसर हैं)



"21वीं सदी की मांग पूरी करेगी नई शिक्षा नीति"

नई शिक्षा नीति-2020 का उद्देश्य भारत को एक ज्ञान आधारित समाज के रूप में विकसित करना और उसे सुपरपावर बनाना है। इसे हासिल करने के लिए नई शिक्षा नीति में क्या अहम प्रावधान किए गए हैं, इस पर शिक्षा मंत्री **रमेश पोखरियाल 'निशंक'** *से* **प्रकाश कुमार** *ने बात की। प्रमुख अंश:*

हमें नई शिक्षा नीति की क्या जरूरत थी, जबकि अभी पहले की नीतियों के एजेंडे पर ही अमल नहीं हो पाया है?

नई शिक्षा नीति-2020 पुरानी नीतियों के उन अधूरे एजेंडों को भी पूरा करेगी, जिसमें उनका उद्देश्य सबको और बिना किसी भेदभाव के शिक्षा देना था। पिछली शिक्षा नीति 1986 में आई थी, जिसे 1992 में संशोधित किया गया था। संशोधन के बाद शिक्षा का अधिकार एक मूल अधिकार बन गया। इसके लिए नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 बनाया गया। नई शिक्षा नीति-2020, इक्कीसवीं सदी की पहली शिक्षा नीति है, जिसे 2030 के विकास एजेंडे को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। इसका उद्देश्य भारत को एक ज्ञान आधारित समाज में विकसित कर दुनिया में सुपरपावर बनाना है। इसके लिए स्कूल और कॉलेज की शिक्षा को कहीं ज्यादा समावेशी बनाया गया है। नई नीति को 21वीं सदी की जरूरतों को देखते हुए काफी लचीली और बहु-विषयक शिक्षा प्रणाली के लिए तैयार किया गया है। इसके जरिए हर छात्र की विशेष क्षमता का सदुपयोग किया जा सकेगा।

10+2 की जगह 5+3+3+4 वाला पाठ्यक्रम क्यों अपनाया गया?

नए पाठ्यक्रम को इस तरह तैयार किया गया है कि उससे बच्चे की बुद्धि का विकास हो सके। नीति में कम उम्र से ही बच्चे की इस आधार पर परवरिश करने पर जोर है। इसी कारण 10+2 की जगह 5+3+3+4 वाला पाठ्यक्रम लाया गया है। इसके तहत 3-8, 8-11, 11-14 और 14-18 वर्ष की उम्र के आधार पर पाठ्यक्रम तैयार किया गया है। इस बदलाव से 3-6 वर्ष की उम्र के बच्चे स्कूली शिक्षा से जुड़ जाएंगे। यह पद्धति पूरी दुनिया में लागू है और माना जाता है कि इससे बच्चों का बेहतर विकास होता है।

देश भर के स्कूलों में लाखों शिक्षकों के पद खाली पड़े हैं, ऐसे में 5+3+3+4 प्रणाली कैसे लागू होगी?

नई शिक्षा नीति में शिक्षकों को केंद्र में रखकर मूलभूत बदलाव करने की बात कही गई है। इसके तहत ऐसी चयन प्रक्रिया अपनाई जाएगी, जिससे सभी स्तर पर सबसे अच्छे लोग शिक्षक चयनित हों। इस पूरी प्रक्रिया में शिक्षक के जीवनयापन, सम्मान, प्रतिष्ठा और स्वायत्तता का भी ध्यान रखा जाएगा। नई व्यवस्था में पढ़ाई की गुणवत्ता और शिक्षकों की जवाबदेही पर भी जोर रहेगा। ऐसे क्षेत्रों में जहां

काफी कम साक्षरता है, छात्रों के मुकाबले शिक्षकों का अनुपात कम है। वहां जल्द से जल्द शिक्षकों की नियुक्ति की जाएगी। शिक्षकों की जरूरतों को समझने के लिए हम तकनीक का इस्तेमाल करेंगे। इसके जरिए प्रत्येक राज्य अगले 20 साल में विषय के आधार पर शिक्षकों की जरूरत का आकलन करेगा। उसी आधार पर नियुक्तियां की जाएंगी।

स्कूल में अध्यापन का माध्यम क्या होगा?

ज्यादातर विकसित देशों में शुरुआती स्कूली शिक्षा बच्चों की मातृभाषा में दी जाती है। इसका फायदा यह होता है कि बच्चे के साथ-साथ माता-पिता भी उसकी पढ़ाई में सहभागिता करते हैं। शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 में कहा गया है कि बच्चों को समझाने और व्यावहारिक ज्ञान देने का तरीका उसकी मातृभाषा में होना चाहिए। नई शिक्षा नीति कहती है, आठवीं कक्षा या हो सके तो उससे आगे की कक्षा में भी पढ़ाई का माध्यम मातृभाषा, स्थानीय भाषा या क्षेत्रीय भाषा होनी चाहिए। अगर ऐसा करना संभव नहीं है तो पांचवीं कक्षा तक हर हाल में कोशिश होनी चाहिए कि समझाने का माध्यम मातृभाषा ही हो। यह व्यवस्था सरकारी और निजी दोनों स्कूलों के लिए होगी। इस आधार पर केंद्र और राज्य सरकारें बड़े पैमाने पर क्षेत्रीय भाषाएं जानने वाले शिक्षकों की नियुक्ति कर सकेंगी। इसके लिए अलग-अलग राज्य आपस में शिक्षकों की भर्ती के लिए समझौते भी कर सकते हैं। इस तरह त्रिभाषी फॉर्मूले के आधार उनकी जरूरतें पूरी हो सकेंगी।

बोर्ड परीक्षाओं के लिए नया तरीका क्या होगा?

दसवीं और बारहवीं की बोर्ड परीक्षाएं चलती रहेंगी। लेकिन परीक्षा के तरीके और प्रवेश परीक्षाओं को ऐसा बनाया जाएगा, जिससे कोचिंग क्लास की जरूरत नहीं रह जाएगी। छात्र के पास चुनने के लिए ज्यादा विषय होंगे। वे अपनी इच्छा के अनुसार विषय पढ़ सकेंगे। परीक्षा की प्रक्रिया भी आसान हो जाएगी। यह इस तरह होगी कि अगर कोई छात्र स्कूल की पढ़ाई के आधार पर एक सामान्य पढ़ाई भी करेगा तो वह परीक्षाओं में अच्छा प्रदर्शन करेगा। अच्छे नंबर लाने के लिए उसे कोई अतिरिक्त प्रयास नहीं करना होगा। परीक्षा का दबाव कम करने के लिए छात्र साल में दो बार बोर्ड परीक्षा देगा। एक प्रमुख परीक्षा होगी तो दूसरी जरूरत पड़ने पर सुधार के लिए ली जाएगी। छात्रों और सभी मान्यता प्राप्त बोर्ड के मूल्यांकन के लिए एक राष्ट्रीय मूल्यांकन केंद्र, परख (समग्र विकास के लिए ज्ञान का मूल्यांकन, समीक्षा और विश्लेषण) का गठन किया गया जाएगा जो मानक और दिशानिर्देश तय करेगा। एक राष्ट्रीय टेस्टिंग एजेंसी का भी गठन होगा जो उच्च गुणवत्ता वाला एप्टीट्यूड टेस्ट और विभिन्न विषयों जैसे विज्ञान, भाषा, कला, व्यवसाय, मानविकी के लिए कॉमन प्रवेश परीक्षा लेगी। इस आधार पर विश्वविद्यालयों में साल में दो बार प्रवेश परीक्षाएं ली जाएंगी।



"शिक्षा का व्यवसायीकरण रोकने के लिए शिक्षा नीति में एक अलग अध्याय है। कई ऐसे प्रावधान किए गए हैं, जिनसे व्यवसायीकरण पर रोक लगेगी"

नई शिक्षा नीति में स्कूल पाठ्यक्रमों में अहम बदलाव की बात की गई है, जिसके आधार पर अब भारतीय और स्थानीय परंपराओं और मान्यताओं को ज्यादा तरजीह दी जाएगी...

नई नीति का विजन ही ऐसी शिक्षा प्रणाली विकसित करना है जिसमें भारतीय परंपराओं और मूल्यों को जगह मिले, शिक्षा प्रणाली में इंडिया की जगह भारत की झलक मिले। इसका उद्देश्य ऐसी समतावादी और उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रणाली बनाना है जिससे एक ज्ञान आधारित समाज का निर्माण हो और भारत दुनिया में एक सुपरपावर के रूप में स्थापित हो। राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रूपरेखा समिति की यह जिम्मेदारी होगी कि वह इन मुद्दों को पाठ्यक्रम में शामिल करे। "भारत के ज्ञान" में प्राचीन भारत से लेकर आधुनिक भारत के समय में लोगों के योगदान को शामिल किया जाएगा। हमें यह समझना होगा कि इसकी सफलता भारत के भविष्य की उम्मीदों की दिशा तय करेगी। इसमें शिक्षा, स्वास्थ्य और पर्यावरण आदि सब शामिल हैं। इसमें आदिवासियों के ज्ञान से लेकर स्थानीय और परंपरागत तरीकों को भी जगह मिलेगी। इन तरीकों को वैज्ञानिक तरह से समझ कर ही पाठ्यक्रम में शामिल किया जाएगा। ये तरीके गणित, ज्योतिष, मनोविज्ञान, योग, कृषि, इंजीनियरिंग, भाषा, साहित्य, खेल, गवर्नेंस, राजनीति, चिकित्सा आदि क्षेत्रों में शामिल होंगे। सभी पाठ्यक्रमों में जरूरी बदलाव शुरुआती स्तर से ही किए जाएंगे। इसमें भारतीय परंपराओं, मान्यताओं और स्थानीयता की झलक होगी। इसमें संस्कृति, धरोहर, रहन-सहन, भाषा, मनोविज्ञान के प्राचीन और समकालीन ज्ञान को भी शामिल किया जाएगा। पाठ्यक्रम में कहानियां, कला, खेल आदि के उदाहरण ऐसे होंगे जिनमें भारतीय परंपराओं और स्थानीयता का तत्व शामिल होगा। इसी तरह आदिवासियों की चिकित्सा पद्धति, उनके वन संरक्षण, पारंपरिक खेती के तरीके, प्राकृतिक कृषि आदि के लिए पाठ्यक्रम बनाए जाएंगे।

वाम दल इस बात का आरोप लगा रहे हैं कि नई शिक्षा नीति-2020 से केंद्रीकरण, सांप्रदायिकता और शिक्षा के व्यवसायीकरण को बढ़ावा मिलेगा।

नई शिक्षा नीति में राज्यों की भूमिका को महत्व दिया गया है। नीति का कोई भी हिस्सा राज्यों की मर्जी के बिना नहीं थोपा जाएगा। नीति का जोर इसी बात पर है कि ऐसी सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली विकसित की जाए जो सबको गुणवत्तापरक शिक्षा दे सके। शिक्षा के व्यवसायीकरण को कैसे रोका जाए, उस पर शिक्षा नीति में एक अलग अध्याय भी शामिल किया गया है। इसके अलावा कई ऐसे प्रावधान किए गए हैं, जिनसे व्यवसायीकरण पर रोक लगेगी। सभी शिक्षण संस्थानाओं का "गैर-लाभकारी" इकाई के रूप में ऑडिट किया जाएगा। अगर कोई संस्थान अतिरिक्त कमाई करता है तो उसे भी शिक्षा के विकास में खर्च करना पड़ेगा। सभी वित्तीय मामलों के लिए पारदर्शी डिसक्लोजर नीति अपनाई जाएगी। नई शिक्षा नीति प्रत्येक भाषा, कला और संस्कृति को समान रूप से विकसित करने पर जोर देती है।

सभी फोटोः पीटीआइ



कितनी असरदारः सोनिया-राहुल-प्रियंका की तिकड़ी के सामने पार्टी को पटरी पर लाने की बड़ी चुनौती

उलझन जो सुलझे ना

क्या कांग्रेस की वंशवादी नेताओं के बदले जमीनी कार्यकर्ताओं को तरजीह देने की नीति कारगर होगी?

पुनीत निकोलस यादव

कांग्रेस की नैया खासकर पिछले एक साल से डांवाडोल है, जबसे राहुल गांधी ने अध्यक्ष पद से इस्तीफा दिया और पिछले 10 अगस्त को बतौर अंतरिम अध्यक्ष उनकी मां सोनिया गांधी के हाथ कमान आई है। पार्टी में न केवल मतभेद बढ़े हैं बल्कि कई अहम नेताओं ने पार्टी का साथ छोड़ दिया है। नरेंद्र मोदी-अमित शाह की जोड़ी की कांग्रेस-विरोधी हवा को शह देने की रणनीति की काट निकालने में पार्टी अपनी नाकाबिलियत का मानो खामियाजा भुगत रही है।

इसके साथ लगातार चुनावी पराजय और हाल के वर्षों में कुछेक जीते राज्यों में अपने घर को एकजुट रखने में नाकामी भी उसकी दुर्दशा बढ़ा रही है। यही नहीं, रह-रहकर उठने वाली महत्वाकांक्षा की हुंकार पुराने दिग्गजों और युवा नेताओं तथा कई बार हमउम्र नेताओं के बीच भी कलह की वजह बन जा रही है।

मार्च से कांग्रेस मध्य प्रदेश में सत्ता गंवा चुकी है, और राजस्थान में भी उसी कगार पर पहुंच गई है, जहां राजनीति के माहिर खिलाड़ी मुख्यमंत्री अशोक गहलोत अपने 46 साल के राजनैतिक अनुभव के बूते बागी नेता सचिन पायलट और भाजपा की सरकार गिराने की कोशिशों की काट में लगे हैं। दोनों ही राज्यों में पार्टी की सरकार को चुनौती चुनी हुई सरकारों को गिराने में अपनी महारत साबित कर चुकी भाजपा से ही नहीं मिली, बल्कि कमोवेश उतने ही जोरदार ढंग से पार्टी के नेताओं से भी मिली। एक समय ज्योतिरादित्य सिंधिया और सचिन पायलट कांग्रेस की अगली पीढ़ी के ऐसे नेता माने जाते थे, जिन पर राहुल गांधी पार्टी को मजबूत करने के लिए भरोसा कर सकते थे। लेकिन अब एक तो भाजपा में जा मिले हैं और दूसरे भले फिलहाल भाजपा में न

जाएं पर पार्टी से नाता तोड़ने का मन बना चुके हैं।

यही नहीं, पंजाब, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और झारखंड जैसे राज्यों में भी, जहां पार्टी अपने बूते या गठबंधन में सरकार में है, बगावत या दलबदल की सुगबुगाहटें हैं (खासकर पंजाब में मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह और छत्तीसगढ़ में मुख्यमंत्री भूपेश बघेल के खिलाफ)। संगठन के स्तर पर भी पार्टी में विरोध के स्वर लगातार मुखर होते जा रहे हैं, जिसमें वरिष्ठ और युवा नेतृत्व के बीच खींचतान चल रही है। लोकसभा सांसद मनीष तिवारी और शशि थरूर जैसे नेता संगठन में बड़ी जिम्मेदारी चाहते हैं। इसके लिए ये नेता पार्टी अध्यक्ष पद से लेकर कांग्रेस कार्यकारिणी में शामिल होने की खातिर संगठन के स्तर पर चुनाव के लिए भी तैयार हैं।

मनीष तिवारी लगातार यह मांग करते रहे हैं कि भाजपा को कारगर चुनावी टक्कर देने के लिए कांग्रेस को विचारधारा और रणनीति पर स्पष्टता की जरूरत है, साथ ही धर्मनिरपेक्षता पर नए नजरिए की दरकार है। भाजपा का अभी तक का सबसे अहम मुद्दा, राम मंदिर निर्माण अब हकीकत में तब्दील होने जा रहा है। ऐसे में पार्टी इन मुद्दों को चुनावों में भुनाने का शायद ही कोई मौका छोड़ेगी। इसे देखते हुए कांग्रेस के अंदर युवा और कई वरिष्ठ नेताओं का मानना है कि पार्टी को अपनी मुस्लिम परस्त होने की छवि तोड़ने की बेहद जरूरत है, जो भाजपा की हिंदुत्व परस्त राजनीति की वजह से बन गई है। कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता का कहना है, "हमें लोगों को यह समझाना होगा कि धर्मनिरपेक्ष होने का मतलब हिंदू विरोधी होना नहीं है। साथ ही, जनता को यह भी समझाना होगा कि सनातन धर्म का असली संदेश सर्वधर्म समभाव है, जिसकी राजनीति कांग्रेस पार्टी करती है।"

अंतरिम अध्यक्ष के रूप में सोनिया गांधी का एक साल पूरा हो रहा है, तो पार्टी में फिर मांग उठ रही है कि उनके 50 वर्षीय बेटे को फिर से कमान सौंप देनी चाहिए। ऐसे में यह सवाल वाजिब हो उठता है कि क्या पिछले एक साल में कमान परिवर्तन से पार्टी के कामकाज में कोई वास्तविक बदलाव आया है? क्या सोनिया गांधी ने पिछले एक साल में चुपचाप यह कोशिश की है कि राहुल गांधी के 18 महीने के कार्यकाल में चली पीढ़ी परिवर्तन की मुहिम पलट दी जाए? पार्टी सूत्रों का कहना है कि राहुल गांधी का कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में वापस लौटना पक्का है, लेकिन सोनिया अभी कुछ महीने कमान नहीं छोड़ने वाली हैं। हालांकि पार्टी में अब सभी नियुक्तियां राहुल गांधी के जरिए ही होती हैं और सोनिया गांधी प्रमुख रूप से संरक्षक की तरह ही हैं। वे अमूमन सहयोगी दलों के साथ सामंजस्य बनाए रखने और वरिष्ठ नेताओं के मन से उनके भविष्य की चिंताओं को दूर करने की भी कोशिश करती हैं। कभी-कभार बहुत जरूरत होने पर असंतुष्ट नेताओं को शांत करने में भूमिका निभाती हैं। उन्होंने देर से ही सही, यह तय किया है कि कांग्रेस शासित राज्यों के मुख्यमंत्रियों और बाकी नेताओं को कामकाज में ज्यादा स्वायत्तता दी जाए और हर छोटे-बड़े फैसले के लिए उन्हें 10, जनपथ का रुख न करना पड़े। उदाहरण के तौर पर, सोनिया और राहुल ने उत्तर प्रदेश की सारी जिम्मेदारी प्रियंका गांधी वाड्रा पर छोड़ दी है और प्रियंका प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष अजय कुमार 'लल्लू' पर कहीं ज्यादा भरोसा करती हैं।



नई पीढ़ी नाराजः ज्योतिरादित्य सिंधिया और सचिन पायलट के कदमों से उठे सवाल

लोकसभा चुनावों में लगातार दूसरी बार जब कांग्रेस की हार हुई तो पार्टी की कमान राहुल गांधी के पास थी। हार की जिम्मेदारी लेते हुए जब राहुल ने अध्यक्ष पद छोड़ने का फैसला किया तो उस समय उनके साथियों ने कांग्रेस कार्यकारिणी के जरिए यह प्रस्ताव पारित कराया कि वे अपने फैसले पर दोबारा विचार करें। यही नहीं, कार्यकारिणी ने राहुल को इस बात की भी जिम्मेदारी दी कि वे पार्टी में आमूल-चूल बदलाव करें। हालांकि राहुल गांधी ने उनके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया और एक खुला पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने पार्टी के वरिष्ठ नेताओं पर भी सवाल खड़े किए जो चुनावों में मिली बुरी हार के बावजूद अपनी जिम्मेदारी लेने से बच रहे थे।

सिंधिया और पायलट के विद्रोही तेवर से पार्टी को समझ में आ गया है कि वंशवाद और वफादारी का हमेशा एक जैसा नाता नहीं होता है

इसके बाद जब कार्यकारिणी ने सोनिया गांधी को अंतरिम अध्यक्ष के रूप में जिम्मेदारी दी तो एक प्रस्ताव भी पारित किया गया कि वे संगठन स्तर पर पार्टी में अहम बदलाव करें। हालांकि इस बात को भी एक साल हो चुके हैं लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर कांग्रेस पार्टी के अंदर किसी अहम बदलाव की झलक नहीं दिखी है। इस दौरान जिले और राज्य स्तर पर पार्टी के अंदर कई अहम बदलाव जरूर हुए हैं। हालांकि पार्टी के स्तर पर हुए इन बदलावों पर न तो विरोधी मीडिया की नजर गई है और न ही पार्टी में मौजूद विरोधी तत्वों की नजर गई।

कांग्रेस महासचिव तथा राज्यसभा सांसद के.सी. वेणुगोपाल ने *आउटलुक* को बताया कि पिछले छह महीने से करीब-करीब हर दूसरे हफ्ते पार्टी में कई अहम बदलाव किए गए हैं। जैसे, कर्नाटक



साधने की चुनौती: फेरबदल के बीच वरिष्ठों का भरोसा बनाए रखना अहम

में डी.के. शिवकुमार, उत्तर प्रदेश में अजय कुमार लल्लू, दिल्ली में अनिल चौधरी और गुजरात में हार्दिक पटेल को पार्टी की कमान सौंपी गई है। इसके अलावा सैकड़ों जिले और कई राज्यों में विभिन्न स्तर पर अहम नियुक्तियां की गई हैं, लेकिन इन पर किसी का ध्यान नहीं गया है। वेणुगोपाल का कहना है, इस तरह के अहम बदलाव केंद्रीय स्तर पर इसलिए नहीं दिख रहे हैं क्योंकि ज्यादातर लोगों की नियुक्तियां राहुल गांधी जब पार्टी अध्यक्ष थे, उस दौरान की गई थी। इन लोगों को नई जिम्मेदारी संभाले बमुश्किल दो साल हुए हैं। वे अफसोस जताते हुए कहते हैं कि पार्टी की जो कमियां सामने आती हैं, उन्हें तो प्रचारित किया जाता है लेकिन पार्टी के अंदर जो सकारात्मक पहल की जा रही है, उसे कोई तरजीह नहीं देता। राहुल गांधी के करीबी माने जाने वाले वेणुगोपाल का कहना है, "लोकसभा चुनावों के बाद जब प्रियंका गांधी ने उत्तर प्रदेश में पार्टी की जिला इकाइयों को भंग किया तो उसकी चर्चा तो हर जगह हुई, लेकिन जब पिछले हफ्ते उन्होंने जिला स्तर पर नए अध्यक्ष और दूसरे पदाधिकारी नियुक्त किए तो उसकी कोई चर्चा नहीं दिखी।"

इन बदलावों के जरिए पार्टी की कोशिश है कि अहम पदों पर जमीन से जुड़े नेताओं को जिम्मेदारी मिले। यह लोगों के बीच बन गई उस छवि से एकदम अलग है, जिसमें यह कहा जाता है कि पार्टी केवल वंशवाद को तरजीह देती है। वेणुगोपाल कहते हैं, "पार्टी में आया यह बदलाव राहुल गांधी के शुरू किए गए विजन का ही विस्तार है, जिसमें कोशिश रही है कि संगठन में ज्यादा से ज्यादा लोकतांत्रिक प्रक्रिया अपनाई जाए और प्रतिभावान लोगों को तरजीह दी जाए।"

राहुल गांधी के एक अन्य करीबी नेता का कहना है, "अगर आप यूपीए सरकार के दौर को देखें तो उस वक्त जिन युवा नेताओं को केंद्रीय मंत्रिमंडल में जगह दी गई, वे वंशवाद के सहारे आगे आए थे। इस श्रेणी में जितिन प्रसाद, सचिन पायलट, मिलिंद देवड़ा, ज्योतिरादित्य सिंधिया जैसे लोग शामिल थे। उस दौरान मीनाक्षी नटराजन और मणिक्कम टैगोर जैसे जमीन से जुड़े युवा नेताओं को तरजीह नहीं मिली थी। आज के दौर में भी कांग्रेस के लिए पायलट और देवड़ा जैसे नेता ही चुनौती पेश कर रहे हैं, जबकि टैगोर जैसे नेता उसी प्रतिबद्धता के साथ काम कर रहे हैं। साफ है कि वंशवाद हमेशा विचारधारा के स्तर पर प्रतिबद्धता नहीं दिखाता है। शायद अब इस बात को कांग्रेस खुद भी समझ रही है।"

पार्टी में जमीनी स्तर के कई नेताओं को तरजीह मिली है। इस कड़ी में हार्दिक पटेल, अजय कुमार लल्लू, राजीव सातव जैसे नेताओं के नाम शामिल हैं

लॉकडाउन में श्रमिकों और प्रवासियों की मदद के लिए काफी तारीफ पा चुके और अभी बिहार में बाढ़ पीड़ितों के लिए काम कर रहे, अखिल भारतीय युवा कांग्रेस के अध्यक्ष श्रीनिवास बी.वी. ने *आउटलुक* से बातचीत में कहा, "राजनीति में मेरा कोई गॉडफादर नहीं है। मैं बूथ स्तर पर काम करता था, राहुल ने मुझे वहां से उठाकर भारतीय युवा कांग्रेस अध्यक्ष की जिम्मेदारी दी है। अभी कांग्रेस को छोड़कर वे लोग जा रहे हैं, जिन्हें बिना कोई संघर्ष किए सब कुछ थाली में परोसा हुआ मिल गया था। वे जमीन पर काम करने से कतरा रहे हैं।"

श्रीनिवास और हाल ही में राज्यसभा के लिए चुने गए राजीव सातव जैसे कई युवा नेताओं को राहुल गांधी ने पार्टी में शुरू किए गए "प्रतिभा खोज" कार्यक्रम के तहत 2004 से 2009 के बीच चुना था। लेकिन उस दौरान राहुल गांधी को पार्टी के वरिष्ठ नेताओं का साथ नहीं मिला। इस वजह से पार्टी के अंदर चुनाव की प्रक्रिया थम गई। वेणुगोपाल कहते

हैं, "अब समय आ गया है कि युवाओं को नेतृत्व के लिए तैयार किया जाए। सातव, टैगोर, ज्योतिमणि, रम्या हरिदा, हिबी इदेन, जीतू पटवारी और हार्दिक पटेल जैसे नेताओं ने जमीन पर काफी काम किया है। इनमें से कोई भी राजनीति में पैसे या वंशवाद की वजह से नहीं आया है।"

कांग्रेस सचिव चंदन यादव का कहना है, "पार्टी केवल वंशवाद को बढ़ावा देती है, यह नजरिया इसलिए बना है क्योंकि मीडिया में एक ऐसा धड़ा है जो कांग्रेस की ऐसी छवि बनाना पसंद करता है। इसलिए बार-बार यही बातें प्रोजेक्ट की जाती हैं कि कांग्रेस के प्रमुख नेता वंशवाद से निकले हैं, जो अच्छी अंग्रेजी बोलते हैं और बहुत ही रईसी वाला जीवन जीते हैं, जबकि जमीन पर काम करने वाले कार्यकर्ताओं की पार्टी में कोई पूछ नहीं है।" यादव कहते हैं, "टैगोर और हरिदास के अलावा राज्यसभा सांसद फूलो देवी नेताम, झारखंड के मंत्री बादल पत्रलेख और गुजरात में विपक्ष के नेता परेश धनानी जैसे कई कांग्रेस नेता हैं जो बहुत ही साधारण परिवार से आए हैं। इन लोगों ने सड़क पर संघर्ष किया है। इन उदाहरणों के बावजूद मीडिया अपने पक्षपाती नजरिए को छोड़ने को तैयार नहीं है।"

जमीन से जुड़े नेताओं के आगे आने का असर पार्टी के मीडिया और सोशल मीडिया विभागों में भी दिखने लगा है। पार्टी के सूत्रों का कहना है कि जमीन से जुड़े मुद्दों को अब ज्यादा तरजीह मिल रही है, हालांकि अभी काफी कुछ करना बाकी है। पिछले साल सितंबर में कांग्रेस के सोशल मीडिया प्रमुख बने रोहन गुप्ता का कहना है, "पार्टी अपनी सोशल मीडिया रणनीति को नए सिरे से तैयार कर रही है। हम ऐसी रणनीति बना रहे हैं जिसमें पार्टी के कार्यकर्ताओं और आम आदमी से सीधा संवाद हो। हमने इसके अलावा 'कांग्रेस के साथ' एक नई पहल की है, जिसके तहत हम ऐसे पेशेवरों को जोड़ रहे हैं जो कांग्रेस के सक्रिय सदस्य नहीं हैं लेकिन कांग्रेस की विचारधारा का समर्थन करते हैं। ताजा आंकड़ों के अनुसार कांग्रेस का सोशल मीडिया एंगेजमेंट भाजपा के मुकाबले करीब 30 फीसदी तक बढ़ गया है।"

पिछले दो महीने में कांग्रेस ने 'स्पीक अप' के जरिए कई सारे अभियान चलाए हैं। इसके तहत तेल की बढ़ती कीमतों, छात्रों के मुद्दे, भारत-चीन के बीच लद्दाख को लेकर छिड़े विवाद और हाल ही में कांग्रेस शासित राज्यों में भाजपा के सरकार गिराने के षड्यंत्र वगैरह पर पार्टी के नेताओं, कार्यकर्ताओं और समर्थकों के बनाए वीडियो को सोशल मीडिया पर जारी किया गया है। गुप्ता का कहना है कि इन सभी वीडियो को बहुत अच्छा समर्थन मिला है। अकेले ट्विटर पर हर एक वीडियो कम से कम तीन लाख बार देखे गए।

जब कोरोना वायरस के बढ़ते को खतरे को देखते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने लॉकडाउन का ऐलान किया तो उस वक्त सोनिया गांधी ने सरकार द्वारा देरी से उठाए गए फैसले पर सवाल खड़े किए। पार्टी ने 11 सदस्यीय सलाहकार समूह का भी गठन किया, जिसमें पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और राहुल गांधी को भी शामिल किया गया। इस कदम के जरिए संदेश साफ था कि विभिन्न अहम मुद्दों पर पार्टी मजबूती से अपना पक्ष रखेगी। इससे यह भी साफ हो गया कि राहुल गांधी एक बार फिर से पार्टी की रोजाना गतिविधियों में शामिल हो रहे हैं। समूह के कम से कम पांच सदस्य के.सी. वेणुगोपाल, रणदीप सुरजेवाला, प्रवीण चक्रवर्ती, सुप्रिया श्रीनेत्र और गौरव वल्लभ की नियुक्ति राहुल गांधी की सिफारिश पर की गई है।

जिस तरह से मोदी सरकार ने कोरोना महामारी से निपटने में शिथिलता दिखाई है, उससे पहले से ही लड़खड़ाती अर्थव्यवस्था और बुरी स्थिति में पहुंच गई है। सलाहकार समूह के एक सदस्य का कहना है कि ये ऐसे मुद्दे हैं जिनके जरिए राहुल प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को परेशानी में डाल सकते हैं। पार्टी के मीडिया सेल से साफ तौर पर कहा गया है कि सरकार पर हमला करने में कोई ढिलाई न बरती जाए, लेकिन यह भी संदेश है कि प्रधानमंत्री पर कोई व्यक्तिगत हमला न किया जाए, ताकि भाजपा को अपनी कमियां छुपाने का कोई मौका नहीं मिले। राहुल ने 12 फरवरी को जब सरकार पर कोरोना महामारी से सही से नहीं निपटने का आरोप लगाया तो उन्होंने यही कहा कि वे सकारात्मक आलोचना के जरिए ही आगे बढ़ेंगे।

1947 के बाद पहली बार गांधी-नेहरू परिवार से एक साथ तीन लोग राजनीति में हैं। सोनिया-राहुल-प्रियंका के सामने पार्टी को पटरी पर लाने की चुनौती

कांग्रेस के ज्यादातर प्रवक्ताओं के बारे में ऐसी राय है कि वे भाजपा प्रवक्ताओं के तीखे हमले पर रक्षात्मक रवैया अपना लेते हैं, लेकिन उनमें भी अब काफी बदलाव दिख रहा है। लद्दाख में भारत-चीन सीमा विवाद पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के शुरू में संकट पर ज्यादा गंभीर न दिखने वाले बयान ने भी कांग्रेस प्रवक्ताओं को भाजपा पर तीखा हमला करने का मौका दे दिया। मोदी ने 19 जून को यह बयान दिया था कि चीन ने गलवन घाटी में कोई घुसपैठ नहीं की है, जबकि उसके ठीक चार दिन पहले ही 20 भारतीय सैनिक, चीनी सैनिकों के साथ हुई झड़प में मारे गए थे। इस घटना ने पार्टी प्रवक्ताओं को कांग्रेस पर 1962 में चीन से मिली हार के धब्बे से उबरने का भी मौका दे दिया।

जिस तरह पार्टी की विभिन्न राज्य इकाइयों में जमीन से जुड़े नेताओं की नियुक्ति हुई, उससे पार्टी में किसी रणनीति के लेकर जो एकरूपता में कमी आ रही थी, उसे भी दूर करने में काफी मदद मिली है। पार्टी के अनेक नेताओं का मानना है कि इन कदमों से साफ है कि राहुल गांधी दोबारा अध्यक्ष पद की कमान संभालने वाले हैं। साथ ही उनकी ताजपोशी बिना किसी बड़े उलटफेर के शांति से की जाएगी। पार्टी के एक वरिष्ठ नेता का कहना है, "भले ही पार्टी में कई अहम बदलाव की शुरुआत हो गई है, लेकिन अब भी चुनाव जीतना हमारे लिए चुनौती है। अगले दो साल में बिहार, पश्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव होने वाले हैं। इसमें बिहार और पश्चिम बंगाल में हम मुख्य विपक्षी दल नहीं हैं जबकि उत्तर प्रदेश में हमें अभी नहीं पता है कि प्रियंका गांधी के प्रयासों का कितना फायदा मिलेगा।"

वरिष्ठ पत्रकार तथा कांग्रेस से राज्यसभा सांसद कुमार केतकर पार्टी की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए कहते हैं, "कांग्रेस पार्टी का मौजूदा संकट केवल नेतृत्व का नहीं है, बल्कि इस समय वह अपनी विचारधारा को लोगों को नहीं समझा पा रही है। भाजपा ने राजनीति को नया रूप दिया है और वह जिस तरह से ध्रुवीकरण, विभाजनकारी और घृणा फैलाने वाली राजनीति कर रही है, उसे चुनौती देने के लिए कांग्रेस को अपनी धर्मनिरपेक्ष और उदारवादी राजनीति को जमीनी स्तर तक पहुंचाना होगा, जिससे देश में एक जन आंदोलन खड़ा हो सके।" एक अन्य वरिष्ठ नेता ने *आउटलुक* को बताया कि संगठन में बदलाव करने से कोई इनकार नहीं करता है लेकिन हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि नई पीढ़ी को तैयार करने के चक्कर में हम कहीं चुनावों में बड़ा नुकसान नहीं उठा लें, क्योंकि अगर आपकी चुनावों में एक बार प्रासंगिकता खत्म हो जाती है तो फिर किसी बात का महत्व नहीं रह जाता है। इस समय पार्टी के शीर्ष नेतृत्व को चाहिए कि वह सबसे पहले नेताओं के बीच संवाद को बढ़ावा दे, जिसमें वरिष्ठ और कनिष्ठ का भेद न रहे और सार्वजनिक तौर पर पार्टी किसी मुद्दे पर बंटी हुई नजर न आए।

केतकर गांधी परिवार के नेतृत्व पर एक और अहम बात कहते हैं, "मौजूदा परिस्थितियों में नेहरू-गांधी परिवार के नेतृत्व में आगे बढ़ना ही सबसे अच्छा दांव है, क्योंकि 1947 के बाद से केवल एक बार, 1991-97 का समय रहा है जब नेहरू-गांधी परिवार का कोई भी व्यक्ति राजनीति में नहीं था। उस समय पार्टी की स्थिति क्या थी, यह जगजाहिर है। आज तो सोनिया-राहुल-प्रियंका तीन लोग इस परिवार से राजनीति में हैं। अब सवाल यही है कि यह तिकड़ी क्या पार्टी को रास्ते पर ला पाएगी।"



आरोप-प्रत्यारोप: महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री ठाकरे और बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश में जांच को लेकर ठनी, सुशांत के पिता के.के. सिंह (बीच में)

मौत पर मंडराता रहस्य

सुशांत सिंह राजपूत की हत्या या आत्महत्या की उलझी गुत्थी की जांच पर भिड़े बिहार और महाराष्ट्र

गिरिधर झा

बॉलीवुड अभिनेता सुशांत सिंह राजपूत ने कथित अवसाद के कारण आत्महत्या की या किसी साजिश के तहत उन्हें मौत के घाट उतार दिया गया? क्या उनकी पूर्व मैनेजर दिशा सालियान ने भी खुदकुशी की, या उनकी भी निर्मम हत्या की गई? महज छह दिन के अंतराल में दोनों घटनाओं के तार क्या जुड़े हैं? क्या दिशा अपनी मौत के पहले किसी पार्टी में फिल्म इंडस्ट्री की कुछ हस्तियों और रसूखदार लोगों के साथ मौजूद थीं? वहां उनके साथ क्या हुआ? क्या सुशांत दिशा की मौत से संबंधित कुछ रहस्योद्घाटन करने वाले थे? सुशांत की गर्लफ्रेंड अभिनेत्री रिया चक्रवर्ती की भूमिका इस केस में क्या है? क्या उन्होंने वाकई अपने परिजनों के साथ मिलकर सुशांत के पैसों का गबन किया?

ये कुछ ऐसे सवाल हैं, जिन्होंने सुशांत की हत्या या आत्महत्या को देश की सबसे बड़ी और पेचीदा 'क्राइम मिस्ट्री' बना दिया है। देश और विदेश में सुशांत के लाखों चाहने वालों ने उन्हें इंसाफ दिलाने की मुहिम चला रखी है। उनके अनुसार, मुंबई पुलिस ने सुशांत केस की पड़ताल में घोर लापरवाही बरती है, जिसकी पेशेवराना अंदाज के लिए तुलना अक्सर स्कॉटलैंड यार्ड से की जाती है। मीडिया में भी इस केस का ट्रायल बदस्तूर जारी है।

यह मामला अब सुप्रीम कोर्ट पहुंच चुका है। पांच अगस्त को इस केस की सुनवाई के दौरान न्यायालय ने मुंबई पुलिस से जांच के दौरान की गई कार्रवाई की पूरी रिपोर्ट मांगी है। सुनवाई के दौरान केंद्र सरकार ने कोर्ट को बताया कि बिहार सरकार की इस केस को सीबीआइ को सौंपने की अनुशंसा मान ली गई है। गौरतलब है, महाराष्ट्र सरकार सुशांत केस को सीबीआइ को सौंपने का लगातार विरोध कर रही है। उसका मानना है कि मुंबई पुलिस पेशेवर तरीके से जांच कर रही है। इस मुद्दे पर उसकी बिहार सरकार से ठन भी गई है, क्योंकि पटना पुलिस ने भी स्वतंत्र रूप से इस केस की जांच शुरू कर दी है।

देश के इतिहास में संभवत: यह पहला मौका है, जब दो राज्य किसी मौत की जांच के मुद्दे पर इस तरह आमने-सामने आ गए हैं। यह सब आखिर हुआ कैसे? जिस मौत को प्रथम दृष्टया खुदकुशी का मामला बताकर मुंबई पुलिस ने जांच शुरू की और अगले डेढ़ महीनों से ज्यादा तक यही मानती रही, वह मामला इतने जटिल रूप में कैसे बदल गया?

दरअसल मुंबई के बांद्रा में पिछले 14 जून को 34 वर्षीय अभिनेता अपने फ्लैट में मृत पाए गए। इसके बाद इसे आत्महत्या का मामला मानते हुए वहां की पुलिस ने जांच शुरू की। बताया गया कि पिछले कुछ महीनों से वे डिप्रेशन का इलाज करा रहे थे और दवा भी ले रहे थे। उनकी मौत से आहत उनके कुछ प्रशंसकों ने बॉलीवुड में भाई-भतीजावाद और गुटबाजी को सुशांत के अवसाद और बाद में उनकी मौत का कारण माना। उनका कहना था कि पिछले साल *छिछोरे* जैसी सुपरहिट फिल्म देने के

बाद भी सुशांत के पास कोई नई फिल्म नहीं थी। यही नहीं, यह भी आरोप लगाया गया कि फिल्म इंडस्ट्री के कतिपय बड़े निर्माता उन्हें 'बाहरी' होने के कारण आगे बढ़ने नहीं देना चाहते थे। शेखर कपूर जैसे मशहूर फिल्मकार ने भी इसके संकेत दिए, जो सुशांत के साथ अपनी महत्वाकांक्षी फिल्म *पानी* बनाना चाहते थे। सोशल मीडिया पर जब बॉलीवुड के अंदर भाई-भतीजावाद के खिलाफ स्वत:स्फूर्त दिखने वाली मुहिम चलने लगी, तो मुंबई पुलिस ने इसे आधार बनाते हुए आदित्य चोपड़ा, महेश भट्ट और संजय लीला भंसाली सहित कई चर्चित हस्तियों से पूछताछ शुरू की।

इस केस में अचानक नया मोड़ तब आया, जब दिवंगत अभिनेता के पिता के.के. सिंह की शिकायत पर सुशांत की कथित गर्लफ्रेंड रिया चक्रवर्ती और उनके कुछ परिजन के खिलाफ पटना पुलिस ने स्थानीय राजीव नगर थाने में एफआइआर दर्ज की। उन्होंने रिया पर सुशांत को आत्महत्या के लिए उकसाने और करोड़ों रुपये के गबन का आरोप लगाया। उनका कहना था कि मुंबई पुलिस इस केस की सही तरीके से जांच नहीं कर रही है। इस एफआइआर के दर्ज होने के बाद बिहार पुलिस ने फौरन एक चार-सदस्यीय टीम जांच के लिए मुंबई रवाना कर दी।

महाराष्ट्र सरकार और मुंबई पुलिस को यह नागवार गुजरा। उनका मानना था कि इस मामले की जांच बिहार पुलिस के अधिकार क्षेत्र के बाहर है, क्योंकि घटना मुंबई में हुई है। उनका तर्क था कि कानूनन पटना पुलिस सुशांत के पिता की शिकायत पर दर्ज एफआइआर मुंबई पुलिस को भेजती, क्योंकि इस केस से संबंधित जांच यहां चल रही है। हालांकि बिहार पुलिस की अपनी दलील है। उनका कहना है कि मुंबई पुलिस अभी तक सुशांत की मृत्यु को मात्र आत्महत्या मान कर जांच कर रही है और इस संबंध में उन्होंने एक भी एफआइआर दर्ज नहीं की है। उनका दावा था कि सुशांत के पिता ने अपने पुत्र के निधन से संबंधित केस पटना में दर्ज किए हैं, इसलिए बिहार पुलिस का यह दायित्व बनता है कि वह इसकी गंभीरतापूर्वक तहकीकात करे।

इसके बाद मामले ने बड़े विवाद का रूप ले लिया। बिहार के पुलिस महानिरीक्षक गुप्तेश्वर पांडेय ने आरोप लगाया कि मुंबई पुलिस पटना से गई टीम के साथ सहयोग नहीं कर रही है। उन्होंने यह भी कहा कि मुंबई पुलिस ने पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट जैसे जरूरी कागजात साझा करने से भी इनकार कर दिया और जांच के लिए उनकी टीम को मूलभूत सुविधाएं भी मुहैया नहीं कराईं। मुंबई पुलिस के कथित असहयोगात्मक रवैये के मद्देनजर बिहार पुलिस ने बाद में एक आइपीएस अधिकारी, पटना मध्य के सिटी एसपी विनय तिवारी को मुंबई भेजने का फैसला किया। उन्हें उम्मीद थी कि वरिष्ठ अधिकारी के जाने से दोनों राज्यों की पुलिस के बीच बेहतर समन्वय स्थापित हो जाएगा। लेकिन तिवारी के मुंबई पहुंचने के कुछ घंटे बाद ही बृहन्मुम्बई नगर निगम (बीएमसी) ने उन्हें चौदह दिनों के लिए क्वारंटीन कर दिया। यही नहीं, उनके हाथ पर इस अवधि में बाहर न निकलने के आशय वाली मुहर भी लगा दी, ताकि वे कहीं आ-जा न सकें। बिहार पुलिस ने इसे अपने अधिकारी को नजरबंद करने की संज्ञा दी। इधर, रिया चक्रवर्ती ने सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर कर पटना में उनके खिलाफ दर्ज की गई एफआइआर को मुंबई स्थानांतरित करने की गुहार लगाई। इसके बाद बिहार और महाराष्ट्र की सरकारों ने भी इस संबंध में उनकी दलीलें सुनने के लिए कैविएट दायर की।






विवाद के नुक्ते: विनय तिवारी और उनके हाथ पर लगी मुहर, दिशा सालियान, सुशांत और मुंबई पुलिस कमिश्नर परमवीर सिंह

रिया सुशांत के साथ लिव-इन रिलेशन में थीं। लेकिन उनकी मौत के मात्र छह दिन पहले ही वे उन्हें छोड़कर अपने घर वापस आ गई थीं। सुशांत के परिवार ने उन पर आरोप लगाया है कि वे सुशांत को उनसे मिलने और बातचीत नहीं करने देती थीं। इस आरोप-प्रत्यारोप के बीच, सुशांत के पिता के अनुरोध पर बिहार की नीतीश कुमार सरकार ने केंद्र से इस केस को सीबीआइ को सौंपने की अनुशंसा कर दी।

इस मामले की सुप्रीम कोर्ट में जब सुनवाई हुई तो केंद्र सरकार के सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता ने कोर्ट को सूचित किया कि सीबीआइ जांच की बिहार सरकार की अनुशंसा स्वीकार कर ली गई है। खबरों के अनुसार, सुनवाई के दौरान न्यायालय ने मुंबई पुलिस को कहा कि एक आइपीएस अधिकारी को क्वारंटीन करने से गलत मैसेज गया है। कोर्ट ने मुंबई पुलिस को, सुशांत केस से संबंधित जांच की प्रगति संबंधी रिपोर्ट तीन दिनों में पेश करने का भी आदेश दिया। इसके साथ ही, सर्वोच्च न्यायालय ने रिया को तत्काल किसी भी तरह की मोहलत नहीं दी। अब सारी नजरें उच्चतम न्यायलय के अगले आदेश पर हैं।

सुशांत की मौत के मामले में परिजन और प्रसंशक आशान्वित हैं कि सीबीआइ जांच दिवंगत अभिनेता के मौत के रहस्य को उजागर करेगी। हालांकि अपनी एफआइआर में सुशांत के पिता ने रिया और उसके परिजनों पर सुशांत को आत्महत्या जैसे कदम उठाने के लिए आरोपित किया है। अभिनेता के कई प्रशंसक उनकी 'हत्या' को उनकी मौत से छह दिन पहले हुई उनकी पूर्व मैनेजर दिशा सालियान की कथित आत्महत्या से जोड़ रहे हैं। हालांकि दिशा के पिता ने मुंबई पुलिस को लिखे पत्र में की गई जांच से कोई असंतोष नहीं जताया है। सोशल मीडिया में ऐसे कई आरोप लग रहे हैं कि दिशा ने आत्महत्या से पहले सुशांत के साथ कुछ राज साझा किए थे, जिसे वह उसकी मौत के बाद दुनिया को बताना चाहते थे और इसी वजह से उनकी 'हत्या' कर दी गई।

मुंबई पुलिस के अधिकारी हालांकि इससे इत्तेफाक नहीं रखते। महाराष्ट्र की सत्तारूढ़ पार्टी शिवसेना का कहना है कि आगामी बिहार चुनाव के मद्देनजर सुशांत की मौत को राजनैतिक रंग दिया जा रहा है, ताकि जद-यू और भाजपा गठबंधन को इसका फायदा मिल सके। सुशांत की मौत पर रोज नए खुलासे हो रहे हैं और अफवाहों का बाजार गर्म है। अब जब सीबीआइ ने एफआइआर दर्ज कर ली है, लोगों को एक युवा और चर्चित अभिनेता की मौत की निष्पक्ष जांच की उम्मीद है, जो इस गुत्थी को जल्द से जल्द सुलझा कर केस को तार्किक परिणति तक पहुंचा सके।

कोरोना काल में बाढ़ की डूब

बाढ़ प्रभावित 45 लाख लोगों के लिए सिर्फ 19 राहत शिविर, यहां दो गज की दूरी रखना मुमकिन नहीं

नीरज झा

बाढ़... यानी सालाना संकट काल, जो इस कोरोना काल में आमजन के लिए विकराल विपदा बनकर टूटी है। अलबत्ता, पी. सईनाथ की प्रसिद्ध किताब *एवरीवन लव्स गुड ड्रॉट* की तर्ज पर कहें तो बाढ़ सत्ता में बैठे हर किसी के लिए संभावनाओं के द्वार भी खोल देती है। हर साल की तरह एक बार फिर बिहार, असम और पूर्वोत्तर के कई राज्य इसकी चपेट में हैं। बिहार के 38 में से 16 जिलों में 66 लाख लोग प्रभावित हैं। उससे पहले बाढ़ ने असम में विकराल रूप दिखाया। वहां के कुल 33 जिलों में से 21 जिले बुरी तरह प्रभावित हैं। कुछ दिनों पहले तक 25 जिलों में बाढ़ का प्रकोप था। वहां अब तक 108 लोगों की मौत हो चुकी है और अब भी करीब 11 लाख लोग प्रभावित हैं। पूर्वोत्तर के इस राज्य में तो बाढ़ का पानी उतार पर है, लेकिन बिहार में यह अपनी भयावहता दिखा रहा है। सबसे अधिक प्रभावित जिले दरभंगा और मुजफ्फरपुर हैं। दरभंगा में बागमती और कमला बलान नदियों ने कहर बरपा रखा है। यहां 15 लाख से ज्यादा आबादी प्रभावित है। मुजफ्फरपुर में भी 11 लाख से अधिक लोग प्रभावित हैं। सीतामढ़ी, शिवहर, सुपौल, किशनगंज, खगड़िया, सारण, समस्तीपुर, सिवान, गोपालगंज, पूर्वी चंपारण, पश्चिम चंपारण और मधुबनी जिले भी बाढ़ की चपेट में हैं।

जाने-माने पर्यावरणविद, बाढ़ एवं सिंचाई अभियंता और जलतत्व विशेषज्ञ डॉ. दिनेश कुमार मिश्र कहते हैं, "बाढ़ सत्ता, नौकरशाह और ठेकेदारों के लिए हर साल अरबों की कमाई और बंदरबांट का पुख्ता साधन है। इसलिए सरकार इसे जीवित रखना चाहती है और अपनी जिम्मेदारियों से भागती है।" हर साल रणनीतियां बनाई जाती रही हैं, बांध की मरम्मत और रखरखाव के नाम पर करोड़ों रुपये खर्च होते हैं, लेकिन 21वीं सदी में भी यह चुनौती जस-की-तस है।

एक तरफ बाढ़ तो दूसरी तरफ कोरोना। इससे संक्रमित लोगों की संख्या में तेज इजाफे को देखते हुए बिहार सरकार ने लॉकडाउन 16 अगस्त तक के लिए बढ़ा दिया है। हर दिन तीन हजार के करीब नए मरीज सामने आ रहे हैं। राजधानी पटना और मुजफ्फरपुर की स्थिति ज्यादा भयावह है। पटना में हर दिन 400 और मुजफ्फरपुर में 200 से अधिक मामले सामने आ रहे हैं।

कोरोना के बढ़ रहे मामले और बाढ़ के कहर से स्थिति चिंताजनक हो गई है, लेकिन सरकारी इंतजामात नाकाफी दिख रहे हैं। राज्य में 45 लाख लोग बाढ़ से

सभी फोटो: नीरज झा



कहां जाऊं: मुजफ्फरपुर में बाढ़ का पानी भरने के बाद घर से सामान निकालता एक परिवार



आपदाः तिरहुत नहर का तटबंध टूटने के बाद जमा भीड़, (दाएं) सामुदायिक रसोई का दृश्य



प्रभावित हैं, जबकि उनके लिए सिर्फ 19 राहत शिविर बनाए गए हैं। बाढ़ प्रभावित 14 जिलों में से सिर्फ चार में राहत शिविर हैं। यही हाल सरकार की तरफ से चलाई जाने वाली सामुदायिक रसोई का है। चार जिलों में एक भी सामुदायिक रसोई नहीं है। शेष प्रभावित जिलों में एक हजार से अधिक रसोई संचालित की जा रही हैं। यानी हर सामुदायिक रसोई पर चार हजार लोग आश्रित हैं। सरकारी राहत के नाम पर सिर्फ तिरपाल जिसके नीचे कई कुनबे साथ बैठने को मजबूर हैं। कहीं-कहीं सामुदायिक रसोई भी है, पर हर रसोई पर हजारों लोगों का बोझ है। इस हाल में एक वक्त के भोजन की आस लगाए लोग दो-गज की दूरी का क्या पालन करें। उन्हें कोरोना पकड़ भी ले तो क्या, कहीं कोई टेस्टिंग की व्यवस्था नहीं। फसलों की बर्बादी का तो कोई आकलन ही नहीं है। कोरोना और बाढ़ की दोहरी मार झेल रहे बिहार की आज यही हकीकत है।

मुजफ्फरपुर शहर से करीब पांच किलोमीटर दूर रजवाड़ा बांध पर बाढ़ पीड़ितों ने बसेरा बना रखा है। सरकारी दावों की पोल खोलते हुए लोग बताते हैं, "एक तिरपाल में पांच-दस लोग एक साथ रहने को मजबूर हैं। महामारी की वजह से कोई भी संस्थान राहत सामग्री देने नहीं आ रहा है। सरकार सोई हुई है। स्वास्थ्य सुविधाएं नदारद हैं। हमलोगों की टेस्टिंग नहीं हुई है। बारिश ने भी कहर ढा रखा है। डर से रात में नींद नहीं आती, पता नहीं कब बांध टूट जाए।" बांध पर ही एक सामुदायिक रसोई चल रही है जिसका जिम्मा रजवाड़ा पंचायत के उपमुखिया गणेश सहनी के पास है। रसोई के इर्द-गिर्द दो सौ से अधिक बच्चे, बूढ़े और महिलाएं बिना मास्क और सोशल डिस्टेंसिंग के खाना तैयार होने का इंतजार कर रहे हैं। सहनी बताते हैं, "क्या करें, लोग मानते ही नहीं। सुबह से डेढ़ क्विंटल चावल बन चुका है। लोगों को समझाते हैं कि लाइन में लग जाइए, लेकिन भूख के आगे कौन सुनता है?"

बिहार में बाढ़ से सर्वाधिक प्रभावित जिले और प्रभावित लोगों की संख्या

दरभंगा	15,33,660
मुजफ्फरपुर	11,44,310
पूर्वी चंपारण	7,09,368
सारण	2,52,000
गोपालगंज	2,28,713
पश्चिम चंपारण	1,43,283
समस्तीपुर	1,20,500

स्रोतः आपदा प्रबंधन विभाग, आंकड़े 31 जुलाई 2020 के

सरकार की तरफ से उठाए जा रहे कदमों को लेकर जनता दल यूनाइटेड (जेडीयू) के प्रवक्ता अजय आलोक कहते हैं, "सौभाग्य की बात है कि बाढ़ ग्रस्त इलाकों से कोरोना के मामले अभी तक नहीं आए हैं, लेकिन यह चुनौती है। लोगों को भी अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। यह व्यावहारिक नहीं कि किसी का घर डूब गया हो, वह बांध पर शरण लिए हो और उसे सोशल डिस्टेंसिंग का पाठ पढ़ाया जाए। सरकार की तरफ से सभी जिलाधिकारियों को सख्ती के साथ कोरोना और बाढ़ से बचाव के निर्देश दिए गए हैं।"

बिहार आपदा प्रबंधन विभाग के प्रधान सचिव प्रत्यय अमृत राहत के अनुसार जहां जरूरत नहीं वहां शिविर नहीं बनाए गए या हटा लिए गए हैं। सामुदायिक रसोई में सोशल डिस्टेंसिंग का पालन कराना मुश्किल है। इसलिए, कोरोना महामारी के बढ़ रहे प्रकोप को देखते हुए 30 जुलाई से इन जगहों पर रैपिड एंटीजन टेस्ट शुरू किया गया है।

बिहार में हर साल बाढ़ से मौतें होती हैं। इस वर्ष अब तक 11 लोगों की मौत हो चुकी है। साल 2017 में भी बाढ़ ने ऐसी ही तबाही मचाई थी। फर्क बस इतना है कि इस बार लोगों को जानलेवा कोरोना वायरस की दोहरी मार झेलनी पड़ रही है। बीते चार वर्षों में करीब एक हजार लोगों ने बाढ़ में जान गंवाई है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक 2019 में करीब 150 लोगों की मौत हुई थी और 17 जिलों की करीब पौने दो करोड़ आबादी प्रभावित हुई थी। सरकार हर साल बाढ़ रोकने के लाखों दावे करती है, लेकिन हर साल वे तमाम दावे उसी बाढ़ में बह जाते हैं।

केंद्रीय जल आयोग की रिपोर्ट के मुताबिक देश में इस वक्त 5,254 बड़े बांध हैं और 447 निर्माणाधीन हैं। सरकार बांध को बाढ़ से बचाव का कवच मानती है, लेकिन विशेषज्ञ इसे ही विनाश का कारण मानते हैं। बाढ़ मुक्ति अभियान को लेकर दो दशक से भी अधिक समय से काम कर रहे विशेषज्ञ डॉ. दिनेश कुमार मिश्र बताते हैं, "नदियों को हम बांध नहीं सकते। पहले बाढ़ ढाई दिनों के लिए आती थी, लेकिन बांध निर्माण के बाद ये ढाई महीने की मुसीबत बन गई। नदी में जल स्तर बढ़ने के साथ पानी अपना रास्ता खुद खोज लेता था। सरकार ने बांध निर्माण तो किया, लेकिन किसी ने यह नहीं सोचा कि ये पानी जाएगा कहां।" बाढ़ पर दर्जनों किताब लिखने वाले डॉ. मिश्र बताते हैं कि इस हाल के लिए सीधे तौर पर सरकार की गलत नीतियां और कुप्रबंधन जिम्मेदार हैं। बांध, बैराज, तटबंध बनाकर नदियों के दायरे को सीमित कर दिया गया, जिससे फायदे के बदले केवल नुकसान हुआ।

संकट कोरोना का, सुर्खियां चुनाव की



पीटीआइ

बढ़ते मामलेः जुलाई में कोरोना संक्रमण में उछाल आया तो लॉकडाउन एक माह बढ़ा

कोरोना संक्रमण पर जल्द ही काबू न किया गया तो लोगों के बढ़ते गुस्से का सत्तारूढ़ गठबंधन को उठाना पड़ सकता है खामियाजा

गिरिधर झा

बिहार में आगामी विधानसभा चुनाव शुरू होने में लगभग तीन महीने ही बचे हैं, लेकिन निरंतर बढ़ते कोरोना संक्रमण के कारण इसके नियत समय पर होने पर संशय के बादल मंडरा रहे हैं। मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की अगुआई में सत्तारूढ़ एनडीए के प्रमुख घटक दलों- जनता दल-यूनाइटेड (जद-यू) और भाजपा ने तो चुनाव की तैयारियां ज़ोर-शोर से शुरू भी कर दी हैं, लेकिन राष्ट्रीय जनता दल के नेतृत्व में गठित महागठबंधन का मानना है कि अभी जनता के बीच जाने का माकूल समय नहीं है। विपक्ष का कहना है कि ऐसे समय में, जब कोरोनावायरस संक्रमण ने विकराल रूप धारण कर लिया है और राज्य में मृतकों की संख्या दिनोदिन बढ़ती जा रही है, चुनाव करवाना प्रजातंत्र के साथ खिलवाड़ करने जैसा होगा।

अपने पिता लालू प्रसाद के अनुपस्थिति में राजद की कमान संभालने वाले तेजस्वी प्रसाद यादव ने आरोप लगाया है कि नीतीश अपनी कुर्सी बरक़रार रखने के लिए लाशों के ढेर पर चुनाव करवाना चाहते हैं। उनके अनुसार, बिहार कोरोना संक्रमण से सबसे बुरी तरह से ग्रस्त है और स्वास्थ्य विशेषज्ञों को आशंका है कि जांच की संख्या अत्यंत कम होने और लचर स्वास्थ्य व्यवस्था की वजह से आने वाले दिनों में यहां अनगिनत मौतें होंगी। इसलिए यह समय चुनाव के लिए उपयुक्त नहीं है। अगर जरूरत पड़े तो राष्ट्रपति शासन लगाया जा सकता है।

हाल ही में लिखे एक ब्लॉग में उन्होंने कहा कि मुख्यमंत्री कोरोना की भयावहता की परवाह न करते हुए महज अपने पद के नवीनीकरण की जुगत में लगे हैं। वे कहते हैं, "उन्हें बिहारवासियों के स्वास्थ्य की बिलकुल चिंता नहीं है, अगर चिंता है तो मुख्यमंत्री की कुर्सी की। हम लाशों की ढेर पर चुनाव नहीं चाहते। हम नहीं चाहते कि तीन महीने बाद लोग पोलिंग बूथ की बजाय श्मशान जाएं।"

लेकिन बिहार के उप-मुख्यमंत्री सुशील कुमार मोदी तेजस्वी की तुलना ऐसे कमजोर विद्यार्थी से करते हैं जो परीक्षा टालने के बहाने सदैव खोजता रहता है। वे कहते हैं, "विधानसभा चुनाव समय पर हों या टल जाएं, एनडीए चुनाव आयोग के निर्णय का पालन करेगा। हम हर स्थिति के लिए तैयार हैं, लेकिन जैसे कमजोर विद्यार्थी परीक्षा टालने के मुद्दे खोजते हैं, वैसे ही राजद अपनी संभावित हार को देखते हुए चुनाव टालने के बहाने खोज रहा है।"

सुशील मोदी के अनुसार, चुनाव में तीन महीने से ज्यादा का समय है, इसलिए इस मुद्दे पर ज्यादा सोचने के बजाय कोरोना संक्रमण से निपटने पर ध्यान देना चाहिए। एनडीए नेताओं का कहना है कि इस संबंध में चुनाव आयोग का जो भी फैसला होगा, वह सबको मान्य होना होना चाहिए। लेकिन एनडीए का घटक दल, केंद्रीय मंत्री रामविलास पासवान की लोक जनशक्ति पार्टी विपक्ष के साथ है। पार्टी अध्यक्ष चिराग पासवान ने चुनाव आयोग को पत्र लिखा है कि कोरोना संक्रमण के कारण न सिर्फ लोगों को खतरा होगा बल्कि मतदान प्रतिशत भी काफी कम होगा।

चुनाव आयोग के लिए यह फैसला आसान नहीं है। उसने पिछले महीने नियत समय पर चुनाव होने की बात कही थी, लेकिन विपक्ष का कहना है कि परिस्थितियां अब बिलकुल बदल गई हैं। वे डिजिटल माध्यम से भी चुनाव कराने का विरोध कर रहे हैं। फिलहाल, आयोग ने राज्य के प्रमुख राजनैतिक दलों से चुनाव प्रचार के तरीकों को लेकर उनके सुझाव

सोनू किशन



सोनू किशन



पीटीआइ

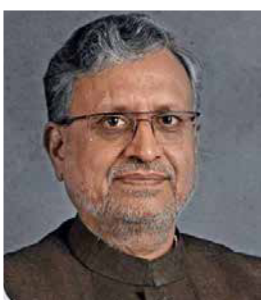


अपने-अपने रंग: **नीतीश पर तेजस्वी (बीच में) का आरोप कि वे राष्ट्रपति शासन से डर रहे हैं, चिराग पासवान भी अभी चुनाव के खिलाफ**

मांगे हैं, ताकि इस संबंध में कोई फैसला किया जा सके। पिछले सप्ताह, राजद समेत नौ विपक्षी दलों ने आयोग को एक ज्ञापन सौंपकर कोरोना संक्रमण की स्थिति को ध्यान में रखकर ही चुनाव संबंधी कोई निर्णय लेने का आग्रह किया था।

इसमें दो मत नहीं कि बिहार में जुलाई में कोरोना संक्रमण की संख्या में अचानक उछाल आया है, जिससे स्वास्थ्य व्यवस्था चरमरा गई-सी लगती है। चार अगस्त तक यहां संक्रमितों की संख्या 60 हजार तक पहुंच गई। 16 जुलाई से पूरे बिहार में एक महीने के लिए फिर लॉकडाउन लगाया गया, लेकिन स्थिति संभलने का नाम नहीं ले रही है। पटना स्थित भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) सहित तमाम राजकीय अस्पताल मरीजों से भरे पड़े हैं। पिछले दिनों बिहार सरकार के गृह विभाग में कार्यरत अवर सचिव उमेश रजक का एम्स के बाहर भर्ती होने का इंतज़ार करने का एक वीडियो वायरल हो गया, जिसने स्थिति की भयावहता को उजागर किया। वीडियो वायरल होने के बाद अस्पताल में उनकी भर्ती तो हो गई लेकिन उन्हें बचाया न जा सका। राज्यभर से ऐसे कई मामले प्रकाश में आए हैं। स्थिति की गंभीरता को देखते हुए नीतीश सरकार ने पटना के कई निजी अस्पतालों में कोरोना का इलाज करने की पहल की है, लेकिन विशेषज्ञों के अनुसार यह कहना मुश्किल है कि स्थिति आगामी चुनाव तक नियंत्रण में आ जाएगी।

विपक्ष ने मुख्यमंत्री पर निजी राजनैतिक स्वार्थों के कारण कोरोना संकट की अवहेलना करने का आरोप लगाया है, लेकिन इससे बेअसर, जद-यू और भाजपा ने वर्चुअल रैलियों के साथ प्रचार शुरू कर दिया है। मुख्यमंत्री खुद 7 अगस्त से वर्चुअल चुनाव प्रचार का आगाज करने वाले थे, लेकिन फिलहाल इसे टाल दिया गया है। दूसरी ओर, राजद या इसकी किसी सहयोगी पार्टी ने डिजिटल प्रचार के लिए कोई कदम नहीं उठाया है। तेजस्वी का कहना है कि अगर भाजपा-जद-यू पूरी तरह आश्वस्त हैं कि बिहार में कोरोना कोई समस्या नहीं है और चुनाव समय पर ही होने चाहिए, तो उन्हें वर्चुअल नहीं, परंपरागत रूप से चुनाव प्रचार करने की पैरवी करनी चाहिए। वे कहते हैं, "मैं नीतीशजी की मन:स्थिति समझ रहा हूं। वे डर रहे हैं कि अगर किसी कारणवश चुनाव टलता है तो राष्ट्रपति शासन में भाजपा उनके साथ वह सब करेगी, जो उन्होंने पिछले वर्षों में भाजपा के साथ किया।"



कमजोर विद्यार्थी की तरह राजद अपनी संभावित हार को देखते हुए बहाने खोज रहा है

सुशील कुमार मोदी
उपमुख्यमंत्री, बिहार

रांची के अस्पताल में इलाजरत, चारा घोटाला में सजायाफ्ता लालू यादव ने भी नीतीश और जद-यू नेताओं की वर्चुअल रैलियों पर ट्विटर के जरिए निशाना साधा है। राजद प्रमुख ने ट्वीट किया, "बिहार में कोरोना के कारण स्थिति दयनीय, अराजक और विस्फोटक है। स्वास्थ्य व्यवस्था दम तोड़ चुकी है। कोरोना नियंत्रण के लिए सरकार को बाज बनना था लेकिन जद-यू नेता लोगों का शिकार करने के लिए 'गिद्ध' बनकर रैली कर रहे हैं। मुख्यमंत्री चार महीने में चार बार भी आवास से बाहर नहीं निकले।"

बिहार में नवंबर के अंतिम सप्ताह में नई सरकार का गठन हो जाना निर्धारित है। राजनैतिक विशेषज्ञों के अनुसार, चुनाव टलने की स्थिति में राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाया जा सकता है और उस अवधि में सत्ता की बागडोर परोक्ष रूप से भाजपा के हाथों होगी। एनडीए नेता राजद नेताओं के चुनाव टालने के तर्क को हास्यास्पद करार देते हैं। जद-यू के प्रधान राष्ट्रीय महासचिव के.सी. त्यागी कहते हैं कि जब अमेरिका में इस परिस्थिति में चुनाव हो सकते हैं तो बिहार में क्यों नहीं? वे इसे विपक्ष का डर और घबराहट से उपजा कुतर्क करार देते हैं। जवाब में तेजस्वी पूछते हैं कि क्या माननीय मुख्यमंत्री बिहार में अमेरिका से अधिक लोगों को मरवाना चाहते हैं? वे यह भी कहते हैं कि अमेरिका में चुनाव परंपरागत रूप से बैलेट पेपर से होते हैं, न कि ईवीएम से। वैसे अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प भी अब अपने देश में चुनाव स्थगित करने की वकालत करने लगे हैं। राजद नेताओं का यह भी कहना है कि बिहार में मात्र 34 प्रतिशत आबादी के पास स्मार्टफोन हैं, इसलिए डिजिटल माध्यम से चुनाव होने पर बहुत सारे लोग वोट देने के अधिकार से वंचित हो जाएंगे।

राजद की परंपरागत ढंग से चुनाव करने की मांग को ख़ारिज करते हुए सुशील मोदी कहते हैं कि बिहार में चुनावों में धनबल और बाहुबल का सबसे ज़्यादा इस्तेमाल कांग्रेस और राजद ने ही किया। "जिनके राज में बिहार बूथलूट और चुनावी हिंसा के लिए बदनाम था, वे आज अपने दाग धोना चाहते हैं। ज्ञापन देने वाले बताएं कि बैलेट पेपर के पुराने तरीके से चुनाव करने की मांग क्यों की जा रही है? मतपेटी से लालू का जिन्न निकलने का वह दौर क्या चुनाव की पारदर्शिता का परिणाम था?"

एनडीए का कहना है कि बिहार चुनाव पर निर्णय लेने का अधिकार सिर्फ चुनाव आयोग को है। भाजपा प्रवक्ता निखिल आनंद का मानना है कि चुनाव आयोग स्वच्छ, स्वतंत्र और सुरक्षित चुनाव कराने को प्रतिबद्ध है। वे कहते हैं, "लोकतंत्र के लिहाज से समय पर चुनाव कराना चुनाव आयोग की चिंता है। कोरोना के दौर में सुरक्षित चुनाव को लेकर चुनाव आयोग काम कर रहा है।"

राजनैतिक विश्लेषकों के अनुसार कोरोना का बढ़ता संकट चुनाव के पूर्व नीतीश सरकार के लिए सबसे बड़ी चुनौती के रूप उभरा है। अगर कोरोना पर जल्दी काबू न किया गया, तो लोगों के बढ़ते गुस्से का खामियाजा सत्तारूढ़ गठबंधन को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उठाना पड़ सकता है। फिलहाल सस्पेंस की स्थिति बरकरार है।

रांची से **नवीन कुमार मिश्र**

दबाव और खींचतान की उलझन

गठबंधन सहयोगी कांग्रेस का सोरेन सरकार पर दबाव बढ़ा, तो भाजपा भी सक्रिय हुई

राज्य में झारखंड मुक्ति मोर्चा (झामुमो)-कांग्रेस गठबंधन सरकार में अनबन की खबरों से मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन को एक साथ कई मोर्चों पर जूझना पड़ रहा है। एक तरफ कोविड-19 का बढ़ता संक्रमण है, तो दूसरी तरफ सहयोगी पार्टी कांग्रेस का सरकार पर दबाव है। कांग्रेस सरकार में हिस्सेदारी को लेकर दबाव बना रही है, लेकिन पार्टी के भीतर भी खींचतान चल रही है। इससे राजनैतिक सरगर्मियां बढ़ गई हैं। गठबंधन सरकार को बने अभी बहुत दिन नहीं हुए हैं, लेकिन प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष तथा राज्य के वित्त मंत्री रामेश्वर उरांव ने यह कहकर तहलका मचा दिया कि कांग्रेस के चार विधायकों पर भाजपा डोरे डाल रही है। सूत्रों का कहना है कि अगर ऐसा ही चलता रहा तो सरकार अस्थिर हो सकती है। इसके पीछे कांग्रेस असंतुष्टों का वह दावा है, जिसमें उनका कहना है कि नौ विधायक उनके साथ हैं। नौ विधायकों के एकजुट होने का मतलब हेमंत सरकार के लिए चिंता का विषय है।



दबाव की राजनीतिः प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष उरांव (बीच में) के साथ अन्य नेता

हालांकि रामेश्वर उरांव के बयान को दबाव की राजनीति के रूप में देखा जा रहा है, क्योंकि उरांव के बयान के एक दिन पहले ही मुख्यमंत्री ने 18 आइएएस अधिकारियों का तबादला किया था। इन तबादलों में ज्यादातर जिलों के उपायुक्त बदले गए थे। इससे पहले अप्रैल में एक साथ 35 आइपीएस के ट्रांसफर हुए थे। लेकिन इन तबादलों को अलग नजरिए से देखा जा रहा है। खुद रामेश्वर उरांव के विभाग के 70 वाणिज्यिकर अधिकारी बदले गए हैं। वहीं कांग्रेस के ही ग्रामीण विकास मंत्री आलमगीर आलम ने 90 प्रखंड विकास अधिकारियों का तबादला कर दिया। कांग्रेस से ही आने वाले स्वास्थ्य मंत्री बन्ना गुप्ता ने कई सिविल सर्जनों और चिकित्सा पदाधिकारियों का तबादला किया। कांग्रेस के खाते से बने मंत्रियों के विभागों में हुए बड़ी संख्या में तबादलों को कांग्रेस को संतुष्ट करने का कदम माना जा रहा है।

बावजूद इसके कांग्रेस में विरोध के स्वर थम नहीं रहे हैं। कभी रामेश्वर उरांव के करीबी माने जाने वाले राज्यसभा सदस्य धीरज प्रसाद साहू असंतुष्टों का नेतृत्व कर रहे हैं। उन्हीं के नेतृत्व में कांग्रेस के तीन विधायक इरफान अंसारी, उमाशंकर अकेला और राजेश कच्छप सरकार और प्रदेश नेतृत्व के खिलाफ शिकायत लेकर दिल्ली गए थे। वहां इन लोगों ने सोनिया गांधी के राजनीतिक सलाहकार अहमद पटेल और गुलाम नबी आजाद से मुलाकात की और बताया कि सरकार में उनकी सुनी नहीं जा रही। यह खेमा प्रदेश नेतृत्व में बदलाव चाहता है। साथ ही, जो विधायक मंत्री नहीं बन सके उनके लिए मंत्री स्तर के पदों यानी निगमों में कोई पद चाहता है।

उधर, उरांव ने भाजपा नेता और पूर्व मुख्यमंत्री रघुवर दास का नाम लिए बिना कहा, "जमशेदपुर विधायकों के संपर्क में हैं।" लेकिन रघुवर दास ने कांग्रेस की एकजुटता पर ही सवाल खड़े कर दिए हैं। उनका कहना है कि वह यह कैसे बता सकते हैं कि कौन किसके संपर्क में है। वे कहते हैं, "कांग्रेस में एकजुटता नहीं है, नेतृत्व से नाराजगी के कारण ही यह सब हो रहा है।" रघुवर की बात पर सियासी गलियारों में इसलिए भी विश्वास किया जा रहा है कि कांग्रेस का एक असंतुष्ट खेमा, राज्यसभा सदस्य धीरज साहू के नेतृत्व में पार्टी के कार्यकारी अध्यक्ष इरफान अंसारी सहित तीन विधायक दिल्ली जाकर पार्टी आलाकमान को शिकायतों का पुलिंदा पकड़ा आया है।

असंतुष्टों की एक व्यक्ति एक पद की भी मांग है। रामेश्वर उरांव का कहना है, "पार्टी आलाकमान का जो फैसला होगा, वह मुझे मान्य है। मैं उनकी बदौलत पार्टी में नहीं हूं। न उन्होंने मुझे टिकट दिया है न ही उन्हें मुझे मंत्री बनाने का अधिकार है।" इस बीच प्रदेश कांग्रेस नेता राजेश ठाकुर मौजूदा स्थितियों से काफी आहत हैं। वे कहते हैं, "किसी को पार्टी से कितनी भी शिकायत हो, उस शिकायत को रखने



सरगर्मियां: मुख्यमंत्री सोरेन पर भाजपा के अर्जुन मुंडा (बाएं) की नजदीकियों की चर्चा, तो रघुबर दास (दाएं) भी सुर्खियों में





के लिए पार्टी फोरम ही सबसे मुनासिब जगह है। मीडिया के माध्यम से असंतोष उछालना किसी तरह मुनासिब नहीं है। जहां तक भाजपा की बात है कि उसे कोई लाभ नहीं मिलने वाला क्योंकि जनता जान चुकी है कि चुनी हुई सरकार को साजिश कर गिराने की उनकी आदत है। झारखंड में इस साजिश का कोई असर नहीं पड़ने वाला।" कांग्रेस के असंतुष्ट विधायक आने वाले दिनों में अपनी गतिविधि तेज कर सकते हैं। वे लोग दिल्ली को साधने में लगे हुए हैं। कांग्रेस नेतृत्व भी झामुमो के साथ संबंध मजबूत करने और पार्टी के भीतर दोबारा सब ठीक करने में लगा हुआ है। पूर्व मुख्यमंत्री रघुवर दास कहते हैं, "तबादलों के जरिए विरोध की आग बुझाने की कोशिश की गई है।" लेकिन जानकारों का मानना है कि जैसे ही कोरोना संकट कम होगा और सरकार में कामकाज शुरू होगा तो ठेका-पट्टे को लेकर विवाद की आग और बढ़ेगी। भाजपा नेतृत्व होने वाले इन्हीं विवादों पर नजर बनाए हुए है और असंतुष्टों का मूड भांप रही है।

हालांकि झामुमो के महासचिव सुप्रियो भट्टाचार्य इसे कांग्रेस का अंदरूनी मामला कहकर पल्ला झाड़ लेते हैं। कांग्रेस के एक खेमे में असंतोष पर बिना नाम लिए उनका कहना है कि धीरज साहू प्रदेश अध्यक्ष बनना चाहते हैं। वे भाजपा सासंद निशिकांत दुबे के उस आरोप को भी सिरे से नकार देते हैं, जिसमें दुबे ने आरोप लगाया था कि झारखंड के अग्रवाल बंधुओं और उनकी कंपनी ने झामुमो को चंदा दिया था। गोड्डा से भाजपा सांसद दुबे पहले से ही हेमंत सरकार के खिलाफ काफी मुखर हैं। विवाद निशिकांत दुबे की पत्नी के नाम एक जमीन से शुरू हुआ था। इसके बाद भट्टाचार्य और दुबे के बीच ट्विटर वार छिड़ गया। फिर तो दुबे ने हेमंत सोरेन के खिलाफ मोर्चा खोल दिया। उन्होंने अग्रवाल बंधुओं की कोलकाता में 22 मंजिली इमारत, रांची और उसके आसपास तीन-चार सौ एकड़ जमीन खरीद में नेताओं के पैसे लगने को लेकर सवाल उठाया है। दुबे का कहना है कि इन प्रॉपर्टी खरीद की जांच की जानी चाहिए। बदले में

जानकारों के मुताबिक गठबंधन सहयोगी कांग्रेस की खींचतान से परेशान मुख्यमंत्री सोरेन की ओर भाजपा पींगें बढ़ा रही है

झामुमो ने निशिकांत दुबे की दिल्ली विश्वविद्यालय से मैनेजमेंट की डिग्री और उम्र प्रमाण पत्र को फर्जी बताते हुए चुनाव आयोग से उनके खिलाफ कार्रवाई की मांग की है।

कांग्रेस के अंदरूनी संकट के साथ झामुमो का संकट भी बढ़ता जा रहा है। करीब 22 करोड़ रुपये की आय से अधिक आमदनी के आरोप की वजह से मुख्यमंत्री के ओएसडी गोपाल तिवारी की सीएमओ से छुट्टी कर दी गई और उनके खिलाफ निगरानी जांच बैठा दी गई। झामुमो के कोषाध्यक्ष रवि केजरीवाल को भी पद से हटा दिया गया। लेकिन साफ तौर पर बताया नहीं जा रहा कि दोनों को क्यों हटाया गया। दोनों का जाना इसलिए भी चर्चा का विषय है क्योंकि दोनों की ही हैसियत ज्यादा थी। हालांकि कांग्रेस और भाजपा दोनों ही इसे पार्टी की अंदरूनी राजनीति का हिस्सा बताते हैं।

इन सबके बीच चौतरफा घिरे मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन को केंद्र सरकार ने अलग ही तरह के धर्मसंकट में डाल दिया है। कुछ दिनों पहले केंद्रीय कोयला मंत्री प्रहलाद जोशी ने अचानक रांची पहुंच कर कई दशक से लंबित मांगों के मद्देनजर कोयला खदानों की जमीन के एवज में सोरेन सरकार को 250 करोड़ रुपये की रॉयल्टी दी है। राजनैतिक जानकारों का कहना है कि यह हेमंत सरकार को भाजपा का चारा है। जोशी करीब एक घंटे मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन के आवास पर रुके और उनके साथ कोयला खदानों की नीलामी सहित अन्य मुद्दों पर बात की। उसके बाद हेमंत सोरेन के सुर भी बदले हुए थे।

हेमंत सोरेन ने बाद में कहा कि ऐसा समन्वय पहले हुआ होता तो झारखंड का स्टैंड अलग होता। कमर्शियल माइनिंग के खिलाफ हेमंत सरकार सुप्रीम कोर्ट गई है। केंद्र की यह महत्वाकांक्षी योजना है, ऐसे में झारखंड का सुप्रीम कोर्ट जाना उसे रास नहीं आया था। कोयला खदानों की कामर्शियल माइनिंग से केंद्र से हेमंत के तल्ख हुए रिश्तों पर मरहम लगाने का काम केंद्रीय जनजातीय कल्याण मंत्री अर्जुन मुंडा को सौंपा गया था। मुंडा जब झारखंड के मुख्यमंत्री थे, तब सोरेन उप-मुख्यमंत्री थे। धुर विरोधी झामुमो को भाजपा के करीब लाने का श्रेय भी मुंडा को ही जाता है। बहरहाल, झामुमो और कांग्रेस में टकराव बढ़ता है तो ये चर्चाएं और गरम हो सकती हैं। ऐसा हुआ तो कर्नाटक, मध्य प्रदेश और राजस्थान के उठापटक का नजारा झारखंड में भी दोहराया जा सकता है।



बढ़ती चुनौतियां: अमरिंदर पर भारी पिछले विधानसभा चुनाव के वादे

प्रभजोत सिंह गिल

कैप्टन की कमान ढीली

अवैध शराब से मौतों से घोषणा-पत्र के 'नौ नुक्तों' पर अपनों की ही नुक्ता-चीनी में घिरी अमरिंदर सरकार

चंडीगढ़ से **हरीश मानव**

मार्च 2017 में दूसरी बार पंजाब का मुख्यमंत्री बनने से पहले कैप्टन अमरिंदर सिंह ने ऐलान किया था कि यह उनकी आखिरी पारी होगी। करीब साढ़े तीन साल के कार्यकाल में अपने ही ऐलान से पलटे कैप्टन अब मार्च 2022 में तीसरी पारी की तैयारी में हैं। लेकिन पिछले चुनाव घोषणा-पत्र की नौ अहम घोषणाएं और नारा "नवें नरोणे पंजाब लई कैप्टन दे नौ नुक्तें" (नए-नकोर पंजाब के लिए कैप्टन के नौ नुक्ते) अब सरकार के गले की फांस बना है। भाजपा के 'कांग्रेस मुक्त भारत' अभियान के बीच पंजाब जैसे अहम राज्य में कांग्रेस की सरकार आगे भी बनी रहे, इसके लिए कांग्रेस आलाकमान का कैप्टन सरकार पर दबाव है कि 2022 के चुनाव से एक साल पहले ये नौ नुक्ते कारगर हों। 2017 के विधानसभा चुनाव अभियान के रणनीतिकार प्रशांत किशोर 2022 के विधानसभा चुनाव में भी कांग्रेस को जीत के नुक्ते देंगे, इसके संकेत मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिंदर सिंह अभी से दे रहे हैं। प्रशांत किशोर ने भी कहा है कि पंजाब आकर कैप्टन की मदद करने में उन्हें खुशी होगी। अमरिंदर ने यह तक कहा कि उनकी पार्टी के 55 विधायक 2022 के चुनाव अभियान को प्रशांत किशोर की सलाह पर चलाने के पक्ष में हैं।

2017 के विधानसभा चुनाव में कांग्रेस के नौ नुक्तों में सबसे अहम कैप्टन अमरिंदर सिंह के मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने के चार हफ्ते के भीतर सूबे से नशे का खात्मा करना था। नशे के खात्मे की सौंगध साढ़े तीन वर्ष से अधूरी है। किसानों को कर्ज मुक्त करने का नुक्ता भी सिरे नहीं चढ़ पाया। बैंकों और आढ़तियों के कुल करीब 90,000 करोड़ रुपये के कर्ज में से तकरीबन 30,000 करोड़ रुपये की कर्जमाफी के वादे में साढ़े तीन साल में करीब 6000 करोड़ के कर्ज ही माफ हो पाए हैं। 'पंजाब दा पानी, पंजाब वास्ते' के मामले में हरियाणा से नहर (एसवाइएल) जल विवाद सुप्रीम कोर्ट में अटका है। राज्य की कुल आबादी में 33 फीसदी एससी आबादी में तमाम बेघरों को घर के लिए 5 मरले (प्रति मरला करीब 30 वर्ग गज) का प्लाट और एक लाख रुपये मदद की दरकार है। 'घर-घर रोजगार' से सूबे के युवा बेजार हैं। उन्हें स्मार्टफोन का भी इंतजार है। इस बारे में मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिंदर सिंह ने कहा, "सरकार के पास 50 हजार स्मार्टफोन की खेप पहुंच गई है। ये फोन सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले 11वीं और 12वीं के विद्यार्थियों को बांटे जाएंगे। उन विद्यार्थियों को प्राथमिकता दी जाएगी जिनके पास स्मार्टफोन नहीं हैं और स्मार्टफोन की मदद से वे ऑनलाइन पढ़ाई जारी रख सकेंगे।"

केबल टीवी, ट्रांसपोर्ट, खनन और शराब माफिया के सफाए पर साढ़े तीन साल से सरकार की सफाई जारी है। अपने ही नौ नुक्तों पर कांग्रेस के





पीटीआइ

110 मौतों के बादः **जहरीली शराब के पीड़ित और इसके खिलाफ प्रदर्शन करते आप समर्थक**

सांसदों और विधायकों ने मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिंदर सिंह के खिलाफ मोर्चा खोल दिया है। *आउटलुक* से बातचीत में राज्यसभा सांसद प्रताप सिंह बाजवा ने कहा, "कैप्टन ने पंजाब से चार हफ्ते में नशे के खात्मे के लिए सार्वजनिक सभा में गुटका साहिब (श्री गुरुग्रंथ साहिब का पावन लघु रूप) की सौगंध खाई थी, पर साढ़े तीन साल में बढ़े नशे और इससे हुई मौतों की वजह से कैप्टन ने कांग्रेस सरकार की किरकिरी कराई है। हाल ही में जहरीली शराब से ही 110 से अधिक मासूम जिंदगियां छिन गई हैं।" अवैध शराब और ड्रग्स के नेटवर्क को तोड़ने का दावा करने वाली कैप्टन सरकार सवालों के घेरे में है। नवजोत सिद्धू के करीबी कांग्रेस विधायक परगट सिंह ने कैप्टन अमरिंदर सिंह को कमजोर मुख्यमंत्री बताते हुए *आउटलुक* से कहा, "जिन मुद्दों को लेकर साढ़े तीन वर्ष पहले हमने सरकार बनाई थी वे क्यों पूरे नहीं हुए? सरकार के साढ़े तीन साल के कार्यकाल पर सवाल खड़े हो रहे हैं, डेढ़ साल बाद चुनाव में जनता को इसका जवाब नेताओं को देना होगा। जिस तरह दस साल अकाली-भाजपा गठबंधन की सरकार चल रही थी, उसी रंग-ढंग में कैप्टन सरकार चल रही है। दोनों में ज्यादा फर्क नहीं है।" कादियां से कांग्रेस विधायक फतेह जंग सिंह बाजवा ने कहा, "मुख्यमंत्री को कुछ अफसरों और करीबियों ने बंधक बना लिया है।" नौ नुक्तों के सवाल पर पंजाब प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष सुनील जाखड़ ने *आउटलुक* से कहा, "घोषणा पत्र पांच साल के लिए होता है, सरकार ने कई वादे पूरे किए



हैं और बाकी वादे भी अगले डेढ़ साल में पूरे कर दिए जाएंगे।

शिरोमणि अकाली दल के प्रवक्ता और पूर्व कैबिनेट मंत्री दलजीत सिंह चीमा का कहना है, "चार हफ्ते में नशे का खात्मा कांग्रेस के चुनाव घोषणापत्र में सबसे अहम था, लेकिन पंजाब आज तक नशे के इस दंश से मुक्त नहीं हो सका है।" नशे के कारोबार में पाकिस्तानी शह, राजनीतिक संरक्षण और स्थानीय लोगों की संलिप्तता कितनी है, उसे सिर्फ इस बात से समझा जा सकता है कि राज्य में नशे का यह अवैध कारोबार थमने का नाम नहीं ले रहा।

2017 में हुए विधानसभा चुनाव के समय पंजाब में नशे की तस्करी बड़ा मुद्दा चुनावी हो गया तो कैप्टन अमरिंदर सिंह ने इसके नाम पर खूब रैलियां कीं। पंजाब के राजनीतिक विश्लेषक प्रो. रौणकी राम का कहना है कि पंजाब में 2017 के चुनाव अभियान के दौरान कांग्रेस के राहुल गांधी समेत कैप्टन अमरिंदर सिंह और अन्य नेताओं ने बड़े जोर-शोर से नशे को मुद्दा बनाया था। कांग्रेस ने लोगों के बीच यह संदेश पहुंचाने की कोशिश की कि फौजी रहे अमरिंदर किसी भी कीमत पर नशे के कारोबार को खत्म करके ही दम लेंगे, लेकिन साढ़े तीन साल बाद भी सरकार का दम फूल रहा है।

राज्य में अवैध शराब का कारोबार इसलिए भी फल-फूल रहा है, क्योंकि यहां का आबकारी एक्ट कमजोर है। पंजाब-हरियाणा हाइकोर्ट में मानवाधिकार अधिवक्ता एच.सी. अरोड़ा का कहना है, "आबकारी एक्ट में नशे के कारोबार पर सजा का प्रावधान सिर्फ तीन साल की जेल या एक लाख रुपये का जुर्माना है। यहां जमानत भी आसानी से मिल जाती है। इसी कारण अवैध शराब के धंधे में शामिल लोगों को कानूनी डंडे का डर नहीं होता है। पंजाब में नशे के कारोबार में स्थानीय लोगों से लेकर सीमा सुरक्षाबलों के जवानों तक की मिलीभगत के आरोप हैं। अवैध शराब ही नहीं, सीमा पार से आने वाले ड्रग्स के धंधे में भी बीएसएफ और पंजाब पुलिस के भी अफसर पकड़े जा चुके हैं। अमृतसर, फाजिल्का, गुरदासपुर और फिरोजपुर में सीमा पार से ड्रग्स की सप्लाई के गोरखधंधे में राजनीतिक संरक्षण के अलावा सीमा सुरक्षा ड्यूटी में तैनात अधिकारी और सीमा पर बसने वाले लोगों की मिलीभगत बताई जाती है। पंजाब में बीते दिनों नशे के कारोबार के रास्ते कश्मीर में आतंकी फंडिंग के नेटवर्क का पर्दाफाश भी हो चुका है।

सरकार की इस नाकामी से अपनों के अलावा विपक्षी भाजपा भी एक्शन मोड में आ गई है। हाल ही में पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष जेपी नड्डा ने भी यहां के कार्यकर्ताओं की वर्चुअल रैली में कहा कि वे 23,000 बूथों पर राज्य के मौजूदा हालात की समीक्षा करें। कार्यकर्ताओं को यह पता लगाने के लिए कहा गया है कि कैसे पंजाब में कांग्रेस सरकार ने केंद्र के भेजे राशन की बंदरबांट कर अपनी राजनीति चमकाई है। जाहिर है, कैप्टन अमरिंदर सिंह के लिए चुनौतियां कई हैं।

कैप्टन ने पंजाब से चार हफ्ते में नशे के खात्मे के लिए गुटका साहिब की सौगंध खाई थी, पर साढ़े तीन साल में बढ़े नशे और इससे हुई मौतों की वजह से कैप्टन ने कांग्रेस सरकार की किरकिरी कराई है

प्रताप सिंह बाजवा

राज्यसभा सांसद, कांग्रेस





भव्य आयोजन: अयोध्या में भूमि पूजन करते प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, साथ में आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत और मुख्यमंत्री आदित्यनाथ

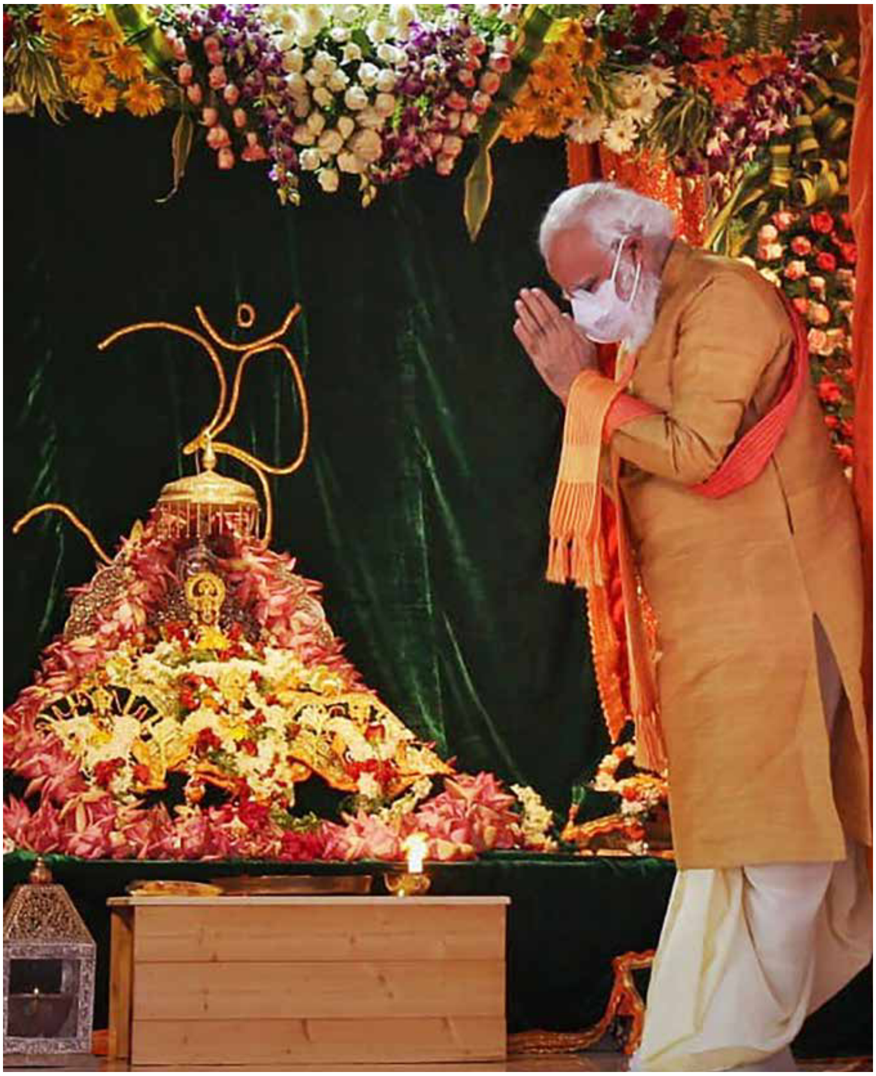
नई लीला के राम

अयोध्या में भव्य राम मंदिर निर्माण से राजनीति और सामाजिक नैरेशन और ताने-बाने में कई बदलावों की संभावना, लेकिन कई सवाल भी

हरिमोहन मिश्र

अयोध्या सजी थी, लाखों दीये जगमग थे, शंखध्वनियां और तुरही का नाद उठ रहा था। महामारी और आर्थिक तबाही का वह सन्नाटा शायद कहीं दुबक गया, जिससे देश त्रस्त है। अलबत्ता, अयोध्या वही है मगर 5 अगस्त के बाद उसके सुर-ताल कुछ दूसरे हो गए, या कहिए वहां विशाल राम मंदिर के लिए भूमि पूजन के भव्य आयोजन में सत्ता के इकबाल से उठी नगाड़ों की धुन नई लीला का मंच तैयार कर रही हैं, जिसका उद्घोष प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के स्वर

सभी फोटो: पीटीआइ





राम के नाम: रामलला के दर्शन करते प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, इंदौर में बने 5 लाख लड्डू (दाएं)

से गूंजा। पहले साष्टांग दंडवत (कोई चाहे तो 2014 में पहली बार संसद में पहुंचे मोदी का घुटनों के बल बैठकर सिर झुकाना याद कर सकता है) और फिर भूमि पूजन के बाद मोदी ने मंच पर और वहां मौजूद चुनींदा दर्शकों-श्रोताओं लेकिन टीवी चैनलों के जरिए करोड़ों घरों में लोगों से कहा, ''5 अगस्त भी 15 अगस्त की तरह अविस्मरणीय तिथि है, जब कई पीढि़यों का बलिदान फलीभूत हुआ।'' मंच पर मौजूदगी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ और श्रीराम तीर्थक्षेत्र न्यास के अगुआ नृत्यगोपाल दास की ही थी, जो नए राजनैतिक ताने-बाने का यकीनन संकेत लिए हुए है।

गौरतलब है कि तकरीबन तीन दशक पहले राम मंदिर का आंदोलन का आगाज करने वाले और 6 दिसंबर 1992 को बाबरी मस्जिद ढहाए जाने के दौरान मौजूद रहे रथी, नायक, पटनायक, सभी लगभग दृश्य से गायब रहे। आप चाहें तो उनके नाम लालकृष्ण आडवाणी, मुरली मनोहर जोशी, उमा भारती, विनय कटियार, कल्याण सिंह वगैरह के रूप में याद कर सकते हैं। यह भी अलग बात है कि 1989 में शिलान्यास के बाद दोबारा यह आयोजन किया गया मगर नींव नहीं रखी जा सकी क्योंकि मंदिर का नया नक्शा अभी मंजूर नहीं हो पाया है। लेकिन इन ब्यौरों और सुर्खियों से ज्यादा अहम वे सवाल है, जो इससे निकलती नई राजनीति की शिला रखते लग रहे हैं।

इससे शायद ही कोई इनकार कर पाए कि 5 अगस्त की तारीख एक नई इबारत लिख गई। संभव है, मोदी सरकार ने इसे सुनियोजित तरीके से चुना है क्योंकि आजादी की लड़ाई की कम से कम दो बड़ी तवारीखें अगस्त के महीने की 9 और 15 हैं। 9 अगस्त 1942 को भारत छोड़ो आंदोलन शुरू हुआ था और 15 अगस्त 1947 को आजादी मिली थी। साल भर पहले 5 अगस्त को ही संविधान के अनुच्छेद 370 को बेमानी बनाकर जम्मू-कश्मीर से विशेष दर्जा हटा लिया गया और उसे दो केंद्रशासित राज्यों जम्मू-कश्मीर और लद्दाख में बांट दिया गया। उससे वहां खासकर घाटी में शुरू हुई नाकेबंदी, पाबंदियां, गिरफ्तारियां, कर्फ्यू साल भर बाद भी पूरी तरह हट नहीं पाई है। तो, कम से कम दो ऐसी घटनाएं 5 अगस्त को मोदी के नेतृत्व में हुईं, जिसे संघ परिवार और हिंदुत्ववादी संगठन आजादी का अधूरा एजेंडा मानते रहे हैं। बस फर्क, कुछ जानकारों के मुताबिक, यह है कि आजादी के दौरान की तारीखें उदारचेत्ता, समावेशी और विविधता बहुल राष्ट्र निर्माण की हैं, जबकि 2019 और 2020 का 5 अगस्त इसके विपरीत रुझान लिये हुए है। जैसा कि, देश में चोटी के बुद्धिजीवी तथा राजनीति शास्त्री प्रताप भानु मेहता ने अपने ताजा स्तंभ में लिखा, ''यह बहुसंख्यकवादी अहंकार और कई तबकों में कमतर होने के एहसास और आजादी सीमित होने का प्रतीक है। इस मायने में यह प्राचीन, मध्ययुगीन भारतीय परंपरा और आजादी के दौरान उपजे भारत-विचार का विलोम है।'' इससे भी अहम यह है कि जो राजनैतिक धाराएं अभी पिछले साल तक हिंदुत्ववादी एजेंडे के विरोध का दावा हल्के या कुछ तेज आवाज में करती रही हैं, उनके स्वर गुम हैं या स्वागत ही कर रही हैं-कुछ खुलकर तो कुछ प्रतीकों में, लेकिन विरोध के स्वर बेहद अल्पमत में हैं। इसी से नई राजनैतिक और कुछ हद नए सामाजिक ताने-बाने का संकेत मिलता है।

कांग्रेस की ओर से ही कुछ थमे स्वर में कश्मीर के मसले पर और अब मंदिर के मामले में खुलकर स्वागत की आवाजें उठीं, जो खुद को मोदी के नेतृत्व वाली भारतीय जनता पार्टी और हिंदुत्ववादी एजेंडे का



भाद्रमास और वर्षाकाल में देव विश्राम के समय शास्त्र वर्जित शुभ कार्य के तर्क आधुनिक दौर की राजनीति ही हो सकती है

इकलौती राष्ट्रीय प्रतिद्वंद्वी होने का दावा करती है। इस 5 अगस्त की पूर्व-संध्या पर कांग्रेस महासचिव प्रियंका गांधी का ''जय सियाराम'' का स्वागत बयान आया। अलबत्ता, यह 'जय श्रीराम' के उद्घोष के विपरीत लोक परंपरा का आभास देता है, जिसे बाबरी मस्जिद ढहाए जाने के बाद कई बुद्धिजीवियों ने याद दिलाया था, ताकि राम के इर्दगिर्द यह नई पुरुष-सत्तात्मक आक्रामक बुनावट की काट की जा सके। लेकिन काट के लिए प्रतीक भर कारगर कम ही होते हैं। फिर तो कई कांग्रेस नेताओं के हनुमानचालिसा का पाठ भी सामने आ गया। दूसरी तमाम पार्टियों सपा, बसपा, राजद, तृणमूल कांग्रेस, बीजद, द्रमुक के बयान भी समर्थन या प्रतीकों में सहमे से विरोध के ही रहे हैं। वामपंथी पार्टियों ने सिर्फ सरकारी शिरकत का विरोध किया। प्रतिकूल मुस्लिम पक्ष रखने का बीड़ा सिर्फ एआइएमआइएम के असदुद्दीन ओवैसी ने उठाया, जिसकी सियासी वजहें जानना कोई मुश्किल नहीं है। बाकी देश और अयोध्या के मुसलमान या उनके नेता तो मानो इसे नियति का खेल मानकर मौन हो गए।

एक दलील यह भी है कि सुप्रीम कोर्ट ने पिछले साल फैसला सुना दिया तो इसे सबको स्वीकार कर लेना चाहिए। वैसे, कुछ न्यायविद और अन्य लोग फैसले पर अलग राय जाहिर कर चुके हैं। सर्वोच्च अदालत ने फैसला भले विवादित स्थल पर मंदिर और बगल में मस्जिद बनाने का दिया हो मगर उसने 1949 में बाबरी मस्जिद में मूर्ति रखने और 1992 में मस्जिद ढहाए जाने को आपराधिक कृत्य माना। इस पर लखनऊ में सीबीआइ अदालत में बयान दर्ज हो रहे हैं और उसे 31 अगस्त तक फैसला सुनाना है। फिलहाल आडवाणी, जोशी समेत सभी आरोपियों ने कहा है कि वे निर्दोष और उन्हें साजिश के तहत फंसाया गया है। यह अलग बात है कि वे 6 दिसंबर 1992 को मौके पर मजबूत थे। लेकिन यहां मामला राजनैतिक नैरेशन का है, न कि मंदिर निर्माण का। बेशक, इस नैरेशन की कड़ी चुनावी राजनीति से भी जुड़ती है। मोदी इसके सहारे 2024 के अगले लोकसभा चुनाव और आदित्यनाथ इसी के सहारे 2022 के विधानसभा चुनाव में अपनी नैया खे ले जाने का एजेंडा बना चुके होंगे, वरना भाद्र मास और वर्षाकाल में देव-विश्राम के समय शास्त्र वर्जित शुभ कार्य के तर्क आधुनिक दौर की राजनीति ही हो सकती है। योजना के मुताबिक, मंदिर 2022 तक आधा और 2024 तक पूरा तैयार



हर जगह उल्लास: **बनारस में गंगा के किनारे दीप प्रज्ज्वलित कर खुशी मनाते लोग**

हो सकता है।

लेकिन बाकी दलों को भी चुनावी पेशबंदी मंदिर का समर्थन करने या मौन बनाए रखने को बाध्य कर रही होगी, वरना आडवाणी का रथ बिहार में रोकने वाले लालू प्रसाद यादव की राजद के सुर आज क्यों बदले हैं और उत्तर प्रदेश में 1990 में अयोध्या में विश्व हिंदू परिषद की पहली 'कार सेवा' पर पाबंदी लगाने वाले मुलायम सिंह यादव की पार्टी सपा ही क्यों मौन रहती। दोनों ही पार्टियों में कमान नई पीढ़ी क्रमशः तेजस्वी यादव और अखिलेश यादव के हाथ आ गई है। बसपा की मायावती ने भी पहले दलित पुजारियों की गैर-मौजूदगी का मुद्दा उठाया, फिर राम के हवाले से समावेशी संस्कृति की बात भर की। चुनाव बंगाल में भी होने हैं। सो, ममता बनर्जी ने भी राम के हवाले से सधा-सा बयान दिया। यह बताता है कि नए राजनैतिक नैरेशन की ताकत आज क्या है, जो सबको समर्पण करने पर बाध्य कर रहा है। यह फर्क तब और साफ सुनाई पड़ सकता है, जब आप 1992 में बाबरी मस्जिद ढहाए जाने के वक्त को याद करें। तब मुलायम, लालू या ऐसे तमाम नेता खम ठोंककर मंदिर आंदोलन के खिलाफ बोलते थे और उनकी बात सुनी जाती थी। बाबरी मस्जिद ढहाए जाने के बाद हुए उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनावों में सपा-बसपा गठजोड़ को बहुमत मिला और उनका नारा ही था 'मिले मुलायम-कांशीराम हवा हो गए जय श्रीराम।' आज वैसा नारा शायद ही कोई लगा पाए। बेशक, इस दौर परिवर्तन में तमाम भाजपा विरोधी पार्टियों की भी अपनी अहम भूमिका गिनाई जा सकती है। न सिर्फ धर्मनिरपेक्षता पर इन दलों ने अजब-गजब तेवर अपनाए, बल्कि पहचान और वोटबैंक की राजनीति के साथ-साथ सरकारों में निकम्मापन और भ्रष्टाचार के किस्से भी लोगों के मोहभंग का कारण बने। लिहाजा, 2014 में भाजपा और एनडीए की सरकार बनने के बाद संघ परिवार का नैरेशन जोर पकड़ने लगा और 2019 के चुनावों में उससे भी बड़ा बहुमत हासिल करके उसने हिंदुत्ववादी राष्ट्रवाद और राम के अपने नैरेशन को ऐसे मुकाम पर पहुंचाने में कामयाबी पाई कि अब बाकी पार्टियों के लिए हालात मुश्किल होते जा रहे हैं।

बहरहाल, यह नैरेशन सिर्फ राजनीति में ही नहीं बदला है, बल्कि साहित्य खासकर पॉप साहित्य में भी इस तरह की व्याख्याएं युवा पीढ़ी को लुभा रही हैं। अंग्रेजी से आया यह फैशन हिंदी में परवान चढ़ने लगा है और कई युवा लेखक राम, शिव और पौराणिक पात्रों को नए जमाने के मुताबिक ढालकर किस्सागोई करने लगे हैं। लेकिन एक बात तो तय है कि ये राम तुलसीदास के '*गरीबनवाज*' और कबीर के '*घट-घट व्यापी*' राम से कुछ अलग हैं, जहां भव्यता ही लुभाती है। संभव है, जनमानस में राम की पुरानी लोकहितैषी छवि लौट आए, जो बकौल तुलसी उनके हृदय में बसते हैं जिन्हें *जात-पात धन धरम बढ़ाई* नहीं सुहाती। लेकिन मौजूदा राजनैतिक वातावरण तो कुछ और ही कहता है।

धर्म की राजनीति का अंत हो

मंदिर-मस्जिद की दीवारों को तोड़ आर्थिक उन्नति के नए संकल्प का सूत्रपात ही अयोध्या का बड़ा सबक



हेमंत शर्मा

वह जून 1989 का दौर था। इस दौर में जब हिमाचल के पालमपुर में भाजपा ने अपनी पार्टी की कार्यकारिणी में अयोध्या विवाद को एजेंडे में लिया तो शायद भाजपा नेताओं को भी भरोसा नहीं रहा होगा कि पांच सौ साल का यह विवाद उनकी पार्टी को दुनिया की सबसे बड़ी पार्टी बना देगा। अयोध्या हिंदू पुर्नरूत्थान का केंद्र बना जाएगा। 5 अगस्त को अयोध्या में सिर्फ राम मंदिर का शिलान्यास ही नहीं, बल्कि दुनिया के नक्शे पर वेटिकन, मक्का जैसे एक शहर की नींव पड़ेगी। इसके लिए अंतरराष्ट्रीय विशेषज्ञों की टीम ने काम करना शुरू भी कर दिया है।

मंदिर निर्माण की शुरुआत से अयोध्या कांड ने समय का एक चक्र पूरा कर लिया है। ऐसा हो सकता है मंदिर निर्माण के साथ धर्म की राजनीति का अंत हो, शताब्दियों से भारतीय जनमानस को मथते इस मुद्दे का दम निकले। पर प्रश्न यह है कि क्या दो सभ्यताओं के इस चिरंतन संघर्ष का घाव भी भरा जा सकेगा? अयोध्या आजादी के बाद आस्था और विभाजन की पीड़ा से फूटा हुआ एक घाव है। ऐसे घाव बहुत मुश्किल से भरते हैं। वर्तमान को बदलना फिर भी आसान होता है मगर इससे इतिहास नहीं बदलता।

दरअसल अयोध्या सही मायनों में धर्म की राजनीति से मुक्ति का अहसास है। भारतीय राजनीति में ध्रुवीकरण की प्रक्रिया अयोध्या से ही शुरू हुई थी। मंडल के जवाब में कमंडल आया था। वह कामयाब भी रहा। देश की राजनीति और समाज को उसने सीधे तौर पर बांटा। देश की राजनीति मंदिर और मस्जिद के गिर्द घूमती रही। भारतीय जनता पार्टी को इससे फायदा भी हुआ। वह दो सीटों से बढ़ती-बढ़ती 303 सीटों तक पहुंच गई। इस मुद्दे पर हमेशा से दुविधा में फंसी कांग्रेस 415 सीटों से नीचे आते-आते 52 पर आ गई। 1985 के बाद हर चुनाव में यह बोतल का जिन्न बाहर आता और चुनाव बाद बोतल में वापस चला जाता रहा। अब तो मंदिर वहीं बन रहा है। इसलिए आने वाले चुनावों में यह मुद्दा न रहे। धार्मिक ध्रुवीकरण खत्म हो। यह बात मुसलमानों को भी समझ में आ रही थी कि इस ध्रुवीकरण ने संसद में लगातार मुस्लिम प्रतिनिधित्व को घटाया है। इस विवाद से पहले 1980 में जहां लोकसभा में 49 मुस्लिम सांसद चुने जाते रहे, वहीं 2019 आते-आते इनकी संख्या घटकर 27 हो गई।

लंबी और थका देने वाली लड़ाई से दोनों पक्ष यह समझने भी लगे थे कि यह मुद्दा अब कारगर नहीं रहा। फैसले के बाद दोनों तरफ की प्रतिक्रिया से यही सिद्ध होता है कि आज की नई पीढ़ी को वैसे भी इस विवाद में कोई रुचि नहीं रही। आज कुल आबादी का 38 प्रतिशत उन लोगों का है जो 1992 के ध्वंस के बाद पैदा हुए हैं। जो मंदिर-मस्जिद के इस विवाद के बारे में ठीक से जानते भी नहीं। उन्हें सिर्फ यह पता है कि कोई राष्ट्र या समाज नफरत की बुनियाद पर ज्यादा दिन नहीं चल सकता। इसीलिए उसने अतीत से आगे बढ़ने का अदालती रास्ता पा लिया है। इतिहास का मतलब है स्मृतियां और स्मृति के घाव आसानी से नही भरते। फिर अयोध्या का घाव तो उस चेतन-अचेतन धड़कन का प्रतिनिधि है, जिससे धर्म, सभ्यता और मान-सम्मान के तमाम पहलू बंधे हुए हैं। बाबर ने तलवार के बूते जिस आस्था का ध्वंस चाहा, वह आस्था साढ़े चार सौ साल बाद भी इतिहास के इस घाव को नहीं भुला सकी। यह आस्था हर कालखंड में हर कीमत पर मंदिर वहीं बनवाने के लिए संकल्पबद्ध रही। सुप्रीम कोर्ट ने ऐसा समाधान निकाला जिससे यह ध्वनि निकले कि न कोई जीता, न कोई हारा। इस फैसले ने दोनों ही समुदाय को मौका दिया कि वे अपने गिले-शिकवे भुलाकर नए भारत के निर्माण के लिए काम करें।

फैसले के बाद दोनों तरफ की प्रतिक्रिया से यही सिद्ध होता है कि आज की नई पीढ़ी की इस विवाद में कोई रुचि नहीं रही। यह मुद्दा अब कारगर नहीं रहा

सभ्यताओं का संघर्ष मरता नहीं है। वह अचेतन में निरंतर चलता रहता है। अयोध्या हो या येरूशलम, सभ्यताओं के ये कुछ चिरंतन घाव हैं, जिनके संघर्ष पर विराम आसान नहीं है। ये घाव लगातार खून बहाते हैं। नए लक्ष्य देते हैं और सतत संघर्ष की धुरी बने रहते हैं। मंदिर को तोड़कर बाबरी मस्जिद मीर बाकी ने साल 1528 में बनवाई थी। तबसे 491 साल हो गए। हिंदू आस्था पर की गई यह चोट इस बीच हमेशा हरी रही। मुकदमों का दौर चला। मुकदमों के भी 161 साल हो गए। दोनों ओर से आशा और धीरज जवाब देने लगा। राष्ट्र का संयम और धैर्य खो रहा था। इस अधीरता के चरम पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला आया।

अयोध्या का मतलब है, जिसे जीता न जा सके। सुप्रीम कोर्ट के फैसले ने इसे एक बार फिर साबित कर दिया कि अयोध्या अजेय है। उसे जीता नहीं जा सकता। इसके साथ ही कुछ जटिल प्रश्न भी हमेशा के लिए तय हो गए। यानी राम जन्मभूमि वहीं है जहां आज रामलला विराजमान हैं। उस जमीन का बंटवारा नहीं हो सकता। अयोध्या ने मंदिर और मस्जिद दोनों मंजूर किया। सरयू ने माना कि उसका पानी पूजा और वजू दोनों के लिए है। राम की मर्यादा रामराज्य से है और रामराज्य की असली तस्वीर मर्यादा, सद्भाव और संवाद से है। हमें इस सिद्धांत में भरोसा करना होगा। इसकी मर्यादा का मान रखना होगा, तभी अयोध्या के सदियों पुराने घाव का वर्तमान की सुखद स्मृतियों में रूपांतरण होगा। फिर न कोई टीस बचेगी और न ही कोई कसक। अयोध्या एक स्वर्णिम अवसर की तरह है। ये अवसर इस देश की राष्ट्रीय एकता का मिशन बन सकता है। सामाजिक कटुता और वैमनस्य की विष बेलों को सद्भाव और भाईचारे के स्थायी समाधान में बदल सकता है। मंदिर-मस्जिद की दीवारों को तोड़ देश की आर्थिक उन्नति के नए संकल्प का सूत्रपात कर सकता है। जीवन, समाज और राष्ट्र के लिए जरूरी मुद्दों की मुख्यधारा में वापसी का मानक बन सकता है। हमें इस अवसर को किसी भी सूरत में नहीं गवाना चाहिए। ये इतिहास की अग्नि परीक्षा है। ये काल का यक्ष प्रश्न है। हमें पूरी ईमानदारी और सदभावना के साथ इस प्रश्न का सामना करना होगा। यही अयोध्या का सबसे बड़ा सबक है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। अयोध्या पर उनकी पुस्तक चर्चित है)